सौभाग्यलक्ष्मी

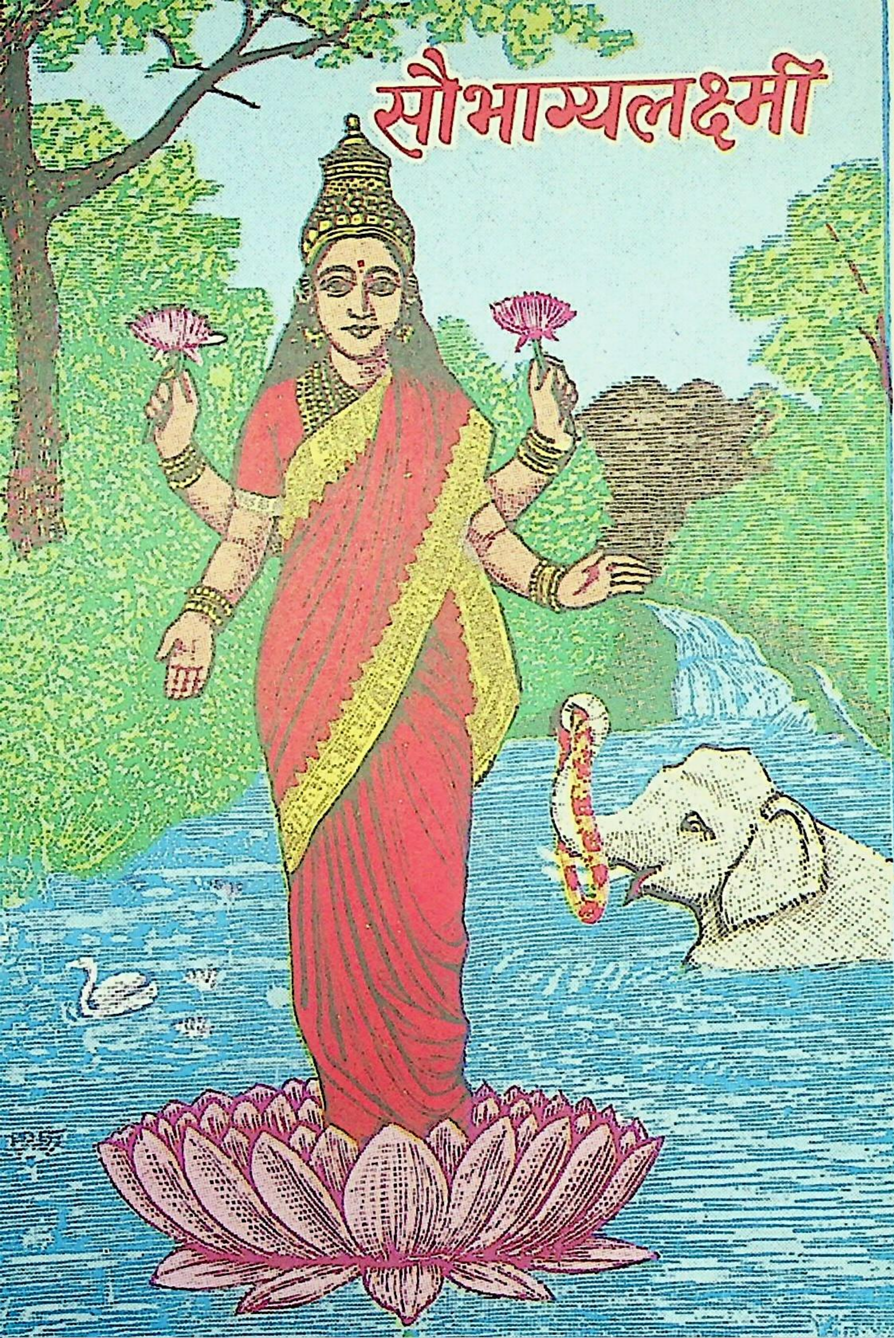

श्री

नानाविधपुराणसमुद्धृता

सौभाग्यलक्ष्मी

मुरादाबादनिवासिकात्यायनगोत्रोद्भव-
पण्डितकन्हैयालालमिश्रविरचितया

हिन्दीटीकयासमेता

मुद्रक एवं प्रकाशकः
खेमराज श्रीकृष्णदास™,
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

संस्करण : फरवरी २०१८, संवत् २०७४

मूल्य : ६० रुपये मात्र ।

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

© सर्वाधिकार : प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass Prop: Shri Venkateshwar Press, Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s.Khemraj Shrikrishnadass Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400 004, at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013

श्री

दो शब्द

यो धर्म्मशीलो विजितेन्द्रियश्च,
विद्याविनीतो न परोपतापी।
अगर्वितो यश्च जनानुरागी,
तस्मिन्सदाऽहं पुरूषे वसामि ॥

जो मनुष्य धर्मपरायण , जितेन्द्रिय, अर्थात् इन्द्रियोंको जीतनेवाला, विद्यावान्, विनयसम्पन्न, अहंकार रहित है, सब प्राणियों के प्रति अनुराग दिखाता है और जो दूसरे मनुष्योंके हृदयमें किसी प्रकारका क्लेश नहीं पहुँचाता, हे सुखानन्द भगवन्! मैं सदैव उस पुरुषके यहाँ वास करती हूँ।

केवल मात्र इस एक श्लोकसे ही इस ग्रंथका महत्त्व पूर्णतया प्रगट हो जाता है। इसमें अत्यन्त सरल और ललित भाषामें बताया गया है कि, किस पुरुष, किस पदार्थ और किस स्थानमें लक्ष्मीका निवास रहता है। किन लक्षणों से युक्त स्त्री और पुरुष, पुरुषार्थ द्वारा लक्ष्मीको प्राप्त कर सकते हैं तथा किन दुर्लक्षणोंसे और दुरुपयोगोंसे लक्ष्मीका विनाश होता है। इस ग्रन्थमें यह भी बताया गया है कि किस कोटिके मनुष्योंके संसर्ग, किन व्यक्तियोंकी कुसंगति तथा किन दुर्वासनाओंसे लक्ष्मीका प्राप्त होना असम्भव होता है और प्राप्त की हुई लक्ष्मी भी कुपित होकर चली जाती है।

अन्तमें लक्ष्मीदेवीका स्वरूप, उसके प्रसन्न करनेकी विधि, स्तोत्र, कवच, माहात्म्य और पूजापर अनेक प्रकारसे प्रकाश डाला गया है और तत्संबंधी मंत्रोंको संगृहीत किया गया है। परमपिता जगदीश्वर सच्चिदानन्द-स्वरूप ज्योतिरूप पुरुषका वर्णन और श्रीकृष्णकी सुन्दर स्तुतिके साथ पुस्तक-की समाप्ति की गई है।

यह कहना अत्युक्ति न होगा कि इस ग्रंथके पाठ, मनन तथा ध्यानसे लक्ष्मीप्राप्तिमें विशेष सहायता मिलती है। पुरुषार्थशील व्यक्तिका यह धर्म

है कि वह लक्ष्मीको संचित करनेके लिये, और उसको यथासंभव स्थायी बनाने के लिये इस ग्रन्थका अवश्य अवलोकन करे।

ग्रंथ में वर्णित पद्धति के अनुसार साधना करने पर मनुष्य अवश्यमेव सिद्धि प्राप्त करेगा, यह मुझे दृढ़ विश्वास है।

मंत्रशास्त्रोक्त क्रियाद्वारा ही पूर्वकालीन ब्राह्मण-ऋषियोंने अद्भुत शक्ति दिखाकर सर्वोपरि प्रधानता प्राप्त की थी।

मंत्रविद्याके प्रभावसे ही लंकाधिपति रावणने श्रीरामचन्द्रजी और शेषावतार लक्ष्मणजीको भी विस्मित कर दिया था। वे स्तोत्र, कवच, मंत्र-विद्या आजभी सुलभ हैं, किंतु कलियुगीजीव जिस प्रकार सिद्धि करना चाहते हैं वैसे यह विद्या सिद्धि प्रदान नहीं कर सकती है। मंत्र निर्वीर्य नहीं हैं, आज भी यदि पूर्ण विधिसे अनुष्ठान किया जाय तो अवश्य ही सिद्धि प्राप्त होगी।

अनेक ग्रंथोंके टीकाकार व रचयिता तथा हिन्दी साहित्यके अपूर्व सुप्रसिद्ध सुलेखक मुरादाबाद निवासी पूज्य पितृव्य पं० कन्हैयालालजी मिश्रने इसकी सुमनोहर तथा सरस टीका करके सोनेमें सुगंधवाली कहावत पूर्णतया चरितार्थ की है।

साधारण हिन्दी जाननेवाले भी बड़ी सुगमताके साथ इससे लाभ उठा सकेंगे।

इसके अध्ययन करनेसे पाठक भलीभाँति समझ सकेंगे कि इस ग्रंथका विषय कितना महत्त्वपूर्ण है और भारतकी वर्तमान जटिल परिस्थितिमें इसकी कितनी आवश्यकता है।

कृपापात्र :

बम्बई
२४ दिसम्बर, १९३१
मार्गशिर शु. पूर्णिमा

जगदीशप्रसाद मिश्र
दीनदारपुरा,
मुरादाबाद

अनुक्रमणिका

विषयाः	पृष्ठाः
श्रीकेशवस्य लक्ष्मींप्रतिप्रश्नः	७
लक्ष्मीनिवासस्थानानि	८
लक्ष्मीवंतः पुरुषस्य लक्षणम्	८
पुरुषस्यदानशीलत्वमेवश्रैष्ठ्यम्	८
लक्ष्मीनिवासपदार्थाः	९
लक्ष्मीप्राप्तिकस्त्रीगुणाः	१०
लक्ष्मीनाशकस्त्रीस्वभावः	११
पादस्पर्शनायोग्यपदार्थाः	११
लक्ष्मीप्राप्तिनिमित्तकनियमाः	१२
विनष्टलक्ष्म्यांसत्यांपुनःप्राप्त्युपायः	
लक्ष्म्यानिकटवासोपायः	१४
लक्ष्मीप्रीयते लक्षणानि	१५
लक्ष्मीकृपापात्रपुरुषाचरणम्	१६
लक्ष्मीत्यागितपुरुषचिह्नम्	१७
लक्ष्मीनाशकपुरुषोपलक्षणानि	१८
केशवंप्रति लक्ष्मीवाक्यम्	१९
एतत्स्तोत्रपाठफलम्	२०
इतिलक्ष्मीकेशवसंवादः	२१
विष्णुपुराणगतमिंद्रकृतलक्ष्मीस्तोत्रम्	"
मैत्रेयंप्रतिपराशरवाक्यम्	२१
श्रीसूक्तम्	२२
रुद्रयामलांतर्गतलक्ष्मी चरित्रम्	२९
रुद्रयामलांतर्गतअकारादिक्षकरांत	

विषयाः	पृष्ठा
लक्ष्मीस्तोत्रम्	२९
एतस्तोत्रपाठकस्येष्टसिद्ध्यादिफल-कथनं विधानं च	४०
कमलास्तोत्रम्	४२
एतत्स्तोत्रस्यफलकथनम्	४८
लक्ष्मीकवचम्	४९
एतत्कवचपठनफलम्	५०
कमलाप्रीतिसाधनम्	५३
लक्ष्म्याद्वादशनामस्तोत्रम्	५७
लक्ष्मीमाहात्म्यंपूजाफलंच	६३
अष्टोत्तरशतजपविधानम्	६५
त्रैलोक्यमंगलात्मकं नाम स्तोत्रम्	६८
एतत्स्तोत्रपाठस्यफलकथनम्	७१
एतत्स्तोत्रस्यपुरश्चरणाविधिः	७१
एतत्स्तोत्रस्यनानोपयोगाः	७२
स्तोत्रकोपनेनियमः	७५
कुमारीपूजनविधानम्	७५
प्रत्यहंजपप्रकारः	७६
श्रीकृष्णप्रार्थना	७७
श्रीसच्चिदानंदरूपवर्णनम्	७८
ज्योतिरूपपुरुषवर्णनम्	७८
श्लोकषट्केनश्रीकृष्णस्तुतिः	७९

श्री

अथ सौभाग्यलक्ष्मीः

हिन्दीटीका सहित

शुक उवाच

मेरुपृष्ठे सुवासीनां लक्ष्मीं पप्रच्छ केशवः ।
केनोपायेन देवि त्वं नृणां भवसि निश्चला ।। १ ।।

शुकदेवजीने कहा कि, किसी समय बैकुण्ठनाथ हरि सुमेरुपर्वतपर लक्ष्मीसहित विराजमान थे। उन्होंने कथाके प्रसंगमें लक्ष्मीसे पूछा—हे देवि ! किसप्रकारके कार्यका अनुष्ठान करनेसे तुम मनुष्योंके घरमें अचल होकर स्थित रहती हो ? उसके जाननेकी मैं अभिलाषा करता हूँ ।। १ ।।

शुक्लाः पारावत यत्र गेहिनी यत्र चोज्ज्वला ।
अकलहा स्थिता यत्र तत्र कृष्ण वसाम्यहम् ।। २ ।।

लक्ष्मीजी बोलीं कि, हे कृष्ण ! जिस घरमें सफेद वर्णका पारावत (कबूतर) विराजमान रहता है, जिस घरकी स्त्री परम रूपवती हो और जिस गृहमें कलह (क्लेश) विद्यमान नहीं रहता है, मैं निरंतर वहाँ निवास करती हूँ ।। २ ।।

धान्यं सुवर्णसदृशं तंडुलं रजतोपमम् ।
अन्नञ्चैवातुषं यत्र तत्र कृष्ण वसाम्यहम् ।। ३ ।।

हे कृष्ण जिस गृहके गृहस्थी धान्यको कंचनके समान और चावलोंको चाँदीके समान देखते हैं तथा जिस घरमें अन्नके बीच तुषका लेशमात्र भी नहीं रहता है, मैं उस गृहमें सदा वास करती हूँ ।। ३ ।।

यः सद्विभागी प्रियवाक्यभाषी वृद्धोपसेवी प्रियदर्शनश्च ।
अल्पप्रलापी न च दीर्घसूत्री तस्मिन्सदाहं पुरुषे वसामि ।।४।।

जो मनुष्य भोजनकी सामग्री निकट बैंठे हुए मनुष्यको बाटकर भक्षण करता है, जो मनुष्य प्रियभाषी है, जो वृद्ध पुरुषोंकी सेवा करता है, जो मनुष्य मनोहर, कान्तिपूर्ण है, जो प्रलाप (बकवाद) नहीं करता है, और जिस पुरुषको आलस्य व्याकुल नहीं कर सकता है, हे कृष्ण ! मैं सदा उस पुरुषमें अधिष्ठान करती हूँ। ४ ॥

यो धर्म्मशीलो विजितेन्द्रियश्च विद्याविनीतो न परोपतापी।
अगर्वितो यश्च जनानुरागी तस्मिन्सदाहं पुरुषे वसामि ॥५॥

हे पुरुषोत्तम ! जो मनुष्य धर्मपरायण, जितेन्द्रिय अर्थात् इन्द्रियोंको जीतनेवाला, विद्यावान्, विनयसंपन्न, अहंकार रहित जो सब प्राणियोंके प्रति अनुराग दिखाता है, और जो मनुष्य दूसरे मनुष्योंके हृदयमें किसी प्रकारका भी क्लेश नहीं पहूँचाता, मैं सदा उसी पुरुषके निकट वास करती हूँ ॥ ५ ॥

चिरं स्नाति द्रुतं भुंक्ते पुष्पं प्राप्य न जिघ्रति।
यो न पश्येत्स्त्रियं नग्नां नियतं स च मे प्रियः ॥ ६ ॥

जो मनुष्य बहुत देर तक स्नान करता है, भोजन करनेमें थोड़ा समय व्यतीत करता है जो मनुष्य पुष्प प्राप्त होनेपर भी उसकी गंध ग्रहण नहीं करता है, और नंगी स्त्रियोंपर दृष्टि नहीं डालता है। हे कृष्ण ! वह मनुष्य हमारा परम प्रीतिपात्र है ॥ ६ ॥

त्यागः सत्यञ्च शौचञ्च त्रयमिति महागुणाः।
यः प्राप्नोति गुणानेताञ्छ्रद्धावान्स च मे प्रियः ॥ ७ ॥

शौच, सत्य और दान ये तीन महान् गुण हैं, जो मनुष्य इन सब गुणोंका आधार है और इनमें श्रद्धा रखता है, हे वैकुण्ठनाथ ! वह मनुष्यभी मुझे परम प्रिय है ॥ ७ ॥

सर्वलक्षणमध्ये तु त्याग एव विशिष्यते।
काले देशे च पात्रे च स च त्यागः प्रशस्यते ॥ ८ ॥

संपूर्ण लक्षणोंमें दानही सर्वश्रेष्ठ कहा गया है, परन्तु देश, काल और पात्रके भेदसे वही दान सर्वोत्तम और महान् फलको देनेवाला होता है। जो मनुष्य ऐसी दानशीलताका आधार है, वह मेरा परम प्रियपात्र है ॥ ८ ॥

नित्यमामलके लक्ष्मीर्नित्यं तिष्ठति गोमये ।
नित्यं शंखे च पद्मे च नित्यं श्रीः शुक्लवाससि ॥ ९ ॥

लक्ष्मी सदा आमलेके वृक्ष, गोबर, शंख, तथा कमल और सफेद वस्त्रोंमें रहती है ॥ ९ ॥

वसामि पद्मोत्पलशंखमध्ये वसामि चन्द्रे च महेश्वरे च ।
नारायणे चैव वसुंधरायां वसामि नित्योत्सवमन्दिरेषु ॥ १०॥

हे नाथ ! मैं सदा पद्म, लाल कमल और शंखमें स्थित रहती हूँ । चन्द्रमा के मण्डल और महादेवजीमें रहती हूँ, नारायणके हृदयमें, खजानेमें और और पृथ्वीर जिस जिस स्थानमें प्रतिदिन उत्सव होता है, मैं उस-उस स्थान में विराजमान रहती हूँ ॥ १० ॥

यथोपदिष्टं गुरुभक्तियुक्ता पत्युर्वचो नाक्रमते च नित्यम् ।
नित्यञ्च भुंक्ते पतिभुक्तशेषं तस्या शरीरे नियतं वसामि ॥११॥

जो स्त्री शास्त्रमें कहे विधानानुसार गुरु देवके प्रति भक्ति दिखलाती है, जो स्त्री प्राणान्त होनेपरभी पतिके वचन का उल्लंघन नहीं करती और जो स्वामीके भोजनोपरान्त बचा हुआ भोजन करती है । हे देवदेव ! मैं उस स्त्रीके शरीरमें सदा वास करती हूँ ॥ ११ ॥

तुष्टा च धीरा प्रियवादिनी च सौभाग्ययुक्ता च सुशोभना च ।
लावण्ययुक्ता प्रियदर्शना या पतिव्रता या च वसामि तासु ॥१२॥

हे कृष्ण ? जो नारी सर्वदा प्रसन्नचित्त, धीरस्वभाववाली, प्रियवादिनी, सौभाग्यशालिनी, रूपवती, लावण्यसंपन्न, प्रियदर्शन और पतिपरायण है । मैं ऐसी नारियोंके शरीरमें वास करती हूँ ॥ १२ ॥

श्यामा मृगाक्षी कृशमध्यभागा सुभ्रूः सुकेशी सुगतिः सुशीला ।
गम्भीरनाभिः समदन्तपंक्तिस्तस्याः शरीरे नियतं वसामि॥१३॥

जो स्त्री श्याम अंगवाली, जिसके नेत्रकमल हरिणीके नेत्रके समान बडे हैं, जिसकी कमर पतली है, जिसकी दोनों भौंहें परमरमणीय हैं, जिसके

केश अत्यन्त सुन्दर हैं, जो नारी अच्छी गतिवाली और सुशील है, जिसकी नाभि गहरी और जिसके दांतोंकी पंक्ति बराबर हैं, हे कृष्ण ! मैं ऐसी स्त्रीके शरीरमें सदा वास करती हूँ ।। १३ ।।

या पापयुक्ता पिशुनस्वभावा स्वाधीनकान्तं परिभूतये च ।
अमर्षकामा कुचरित्रशीला तामङ्गनां प्रेतमुखीं त्यजामि ।। १४।।

जो नारी पापकर्ममें निरत, कठोर स्वभाववाली, स्वाधीन (खुद मुखतार), जो स्त्री अपने पतिके पराभव की अभिलाषासे क्रोध दिखलाती है और जो नारी खोटे चरित्रवाली है, हे कृष्ण ! वह प्रेतमुखी है, मैं उसका सर्वथा परित्याग करती हूँ ।। १४ ।।

पुष्पं पर्य्युषितं पूति शयनं बहुभिः सह ।
भग्नासनं कुनारीञ्च दूरतः परिवर्ज्जयेत् ।। १५ ।।

वासी पुष्प, दुर्गन्धि, बहुत से लोगों साथ मिलकर सोना, टूटा हुआ आसन और कुलक्षणा स्त्री, इन्हें सर्वथा परित्याग करना चाहिये । जो लोग हमारी कामना करें, उन्हें ये वस्तुयें छोड़नेसे ही हमारी प्राप्ति हो सकती है ।। १५ ।।

चिताङ्गारकमस्थीनि वह्निं भस्म द्विजञ्च गाम् ।
न पादेन स्पृशेत्पादंकार्पासास्थि तुषं गुरुम् ।। १६ ।।

चिताका अंगार, चिताकी अस्थि, अग्नि भस्मं, ब्राह्मण, गौ, कपासके बीज, तुष और गुरुको चरणसे स्पर्श न करे और अपने चरणकोभी अपने दूसरे चरणसे मर्दन नहीं करना चाहिये । जो पुरुष इसके विपरीत करता है, मैं उसका परित्याग कर देती हूँ ।। १६ ।।

नखकेशोदकञ्चैव मैथुनं पर्व्वसन्ध्ययोः ।
वर्ज्जयेन्नग्नशायित्वमेकाकी मिष्टभोजनम् ।। १७ ।।

हे कृष्ण ! जो मनुष्य लक्ष्मीकी कामना करे वह नख (नाखुन) और केश (बाल) पड़ा हुआ जलपान वा स्पर्श न करे । चतुर्दशी इत्यादिक पर्वके दिन और सन्ध्या समय स्त्री प्रसंग परित्याग करना उसे सर्वथा उचित

है। वह मनुष्य नग्न होकर न सोये और दूसरों को न देकर अकेले ही मीठी वस्तुका भोजन करना भी उसको उचित नहीं है ॥ १७ ॥

शिरः सु पुष्पं चरणौ सुपूजितौ वरांगनामैथुनमल्पभोजनम् ।
अनग्नशायित्वमपर्व्वमैथुनं चिरं प्रनष्टं श्रियमानयन्ति षट् ॥१८॥

जिस पुरुषका मस्तक पुष्पसे शोभायमान रहता है, जिसके दोनों चरण धोने आदिसे सदा शुद्ध हैं, जो मनुष्य रूपवती स्त्रीके सङ्ग रमण करता है, जो थोड़ा भोजन करता है, जो मनुष्य नग्न होकर शयन नहीं करता और पर्वके दिन मैथुनका त्याग करता है, उसकी पूर्व नष्ट हुई लक्ष्मी फिर प्राप्त हो जाती है ॥ १८ ॥

सम्मार्ज्जनीरजो वातं निर्गुण्डीं लकुचं तथा ।
रात्रौ बिल्वञ्चशाकञ्चकपित्थं वर्जयेद्दधि ॥ १९ ॥

बुहारीकी धूर और पवन शरीरमें न लगने दे, रात्रिमें शेफालिका (हारश्रृंगार) का फूल धारण करना और लिचकुच, बेल, शाक, कैथ और दधिका भोजन करना उचित नहीं है, जो मनुष्य इन नियमोंका पालन करता है, मैं सदा उसके निकट विराजमान रहती हूँ ॥ १९ ॥

स्वगात्रासनयोर्वाद्यमपूतं मूर्द्धपादयोः ।
उच्छिष्टस्पर्शनं मूर्ध्नि स्नानाभ्यंगञ्च वर्जयेत् ॥ २० ॥

जो मनुष्य हमारी कृपाकी अभिलाषा करे, वह अपना गात्र और अपने आसनको न बजावे, सदा मस्तक और चरणको शुद्ध रक्खे, मस्तकपर जूंठनका स्पर्श न कराये और स्नान करनेके उपरान्त तेल न लगाये ॥ २० ॥

शयनञ्चान्धकारे च रात्रिवासो दिने तथा ।
म्लानाम्बरं कुवेषञ्च वर्जयेच्छुष्कभोजनम् ॥ २१ ॥

हे कृष्ण ! जो मनुष्य लक्ष्मीकी कामना करे, वह कभी अंधेरे घरमें शयन न करे, दिनमें रात्रिके वस्त्र न पहने और उस पुरुषको मैले वस्त्र, कुवेष तथा सूखा भोजन करना भी वर्जित है ॥ २१ ॥

परेणोद्वर्तितं वक्षः स्वयं माल्यापकर्षणम् ।
आलस्यमवसादञ्च न कुर्य्याल्लोष्ठमर्दनम् ।। २२ ।।

किसी से अपनी छातीको न मलवावे, स्वयं अपने कंठसे माला न उतारे, आलस्य और अवसाद (विवाद) का परित्याग करे और शरीरमें लोष्ठ अर्थात् धूरि इत्यादि का मर्दन करना भी अच्छा नहीं है ।। २२।।

शुक्रवारे च यस्तैलं शिलापिष्टञ्च दर्शके ।
स्वयं वामेन मूर्द्धानं पाणिना नैव संस्पृशेत् ।। २३ ।।

जो मनुष्य शुक्रवार और अमावस्याके दिन गन्धद्रव्य और तेलस्पर्श नहीं करता है और अपने वाम हाथसे जो मस्तकका स्वयं स्पर्श नहीं करता है। उसी मनुष्य पर हमारी प्रीति रहती है ।। २३ ।।

तारकां पुष्पवन्तौ च न पश्येदशुचिः पुमान् ।
नेक्षेद्गुह्यं परस्त्रीणां नास्तं यान्तं दिवाकरम् ।। २४ ।।

अपवित्र अवस्थामें तारे, चन्द्र और सूर्यका दर्शन न करे, पराई स्त्रीके गुप्त स्थानका देखना भी उचित नहीं और अस्त होते हुए सूर्यके प्रति भी दृष्टि न डाले। हे कृष्ण ! जो इस प्रकारके नियम का पालन करता है उसपर मैं प्रसन्न होती हूँ ।। २४ ।।

कुर्य्यान्नान्यधनाकांक्षां परस्त्रीणां तथैव च ।
परेषां प्रातिकूल्यञ्च उदितार्के प्रबोधकम् ।। २५ ।।
नखकण्टक रक्तैश्च मृत्तिकागारवारिभिः ।
वृथा विलेखनं भूमौ न कुर्य्यान्मम कांक्षया ।। २६ ।।

हे पुरुषोत्तम ! जो मनुष्य मेरी प्राप्तिकी अभिलाषा करे, वह पराये धन और पराई स्त्रीकी कामना न करे । दूसरेके प्रतिकूल आचरण करना उसका कर्त्तव्य नहीं, वह मनुष्य सूर्य उदय होनेके पहलेही शय्यासे उठे और नख, कण्टक, रक्त, मिट्टी, कोयला और जलद्वारा वृथा भूमिमें न लिखे ।। २५ ।। ।। २६ ।।

ग्रथितञ्च स्वयं माल्यं स्वयं घृष्टञ्च चन्दनम् ।
नापितस्य गृहे क्षौरं शक्रादपि हरेच्छ्रियम् ।। २७ ।।

जो मनुष्य स्वयं माला गूंथकर कंठमें पहनता है, जो स्वयं चंदन घिसकर गात्रमें लगाता है, जो स्वयं नाईके घर जाकर हजामत करवाता है, वह मनुष्य यदि इन्द्रके समान हो, तो भी लक्ष्मी उसका परित्याग कर देती है ।। २७ ।।

न निन्दा गणके विप्रे पादयोर्नर्त्तनं तथा ।
प्रतिकूलं चरेत्स्त्रीणां भुक्त्वा च दन्तधावनम् ।। २८ ।।

ज्योतिषी और ब्राह्मणकी निन्दा न करे, बैठकर या लेटकर दोनों चरणों का नचाना भी उचित नहीं । स्त्रियोंके प्रति प्रतिकूल आचरण न करे और भोजनके उपरान्त दातून करना भी अनुचित है । हे हरे ! इन सब नियमोंके प्रतिपालन करनेसे मनुष्य हमारी कृपाका भाजन हो सकता है ।। २८ ।।

अनृतं मांससूपं च नग्नां चैव स्त्रियं तथा ।
भक्षणाद्दर्शनाच्चैव शक्रादपि हरेच्छ्रियम् ।। २९ ।।

जो मनुष्य वृथा (अनिवेदित) मांस और त्याज्य अन्न भोजन करता है और जो मनुष्य वस्त्ररहित स्त्रीपर दृष्टि डालता है, वह इन्द्रके समान हो तो भी हतश्री होजाता है ।। २९ ।।

मन्त्रैरयुक्तः परदारसेवी आचारहीनः परसेवकश्च ।
संकीर्णचारी परिवादशीलस्तं निष्ठुरं दम्भमहं त्यजामि।।३०।।

जो मनुष्य अभीष्ट मन्त्र परित्याग करता है, पराई स्त्रीकी सेवा करता है, गुरुजनको छोड़ देता है, जिनकी सेवा करनी योग्य नहीं उनकी सेवा करता है, जो मनुष्य नीचोंके समान आचरण करनेवाला और कलंकग्रस्त है, हे कृष्ण ! मैं ऐसे निष्ठुर दंभीका परित्याग कर देती हूँ ।। ३० ।।

शयनं चार्द्रपादेन रात्रिवासो दिने तथा ।
उत्तरीयमधः कुर्याच्छुष्कपादेन भोजनम् ।। ३१ ।।

हे कृष्ण ! हमारी कृपाकी अभिलाषा करनेवाला मनुष्य गीले चरणोंसे शयन, दिनमें रात्रिके वस्त्रधारण, दुपट्टेकी धोती पहरना और विना चरण धोये भोजन करना परित्याग कर दे ।। ३१ ।।

अशुचिम्लानवस्त्रञ्च दुर्गन्धमसुखावहम् ।
अभूषणामपुष्पाञ्च न कुर्यादात्मनस्तनूम् ।। ३२ ।।

अपवित्र और मैले वस्त्रका परित्याग करे । अपना शरीर दुर्गन्धियुक्त और भूषणरहित न करे और मस्तक पुष्पादिसे सुशोभित रक्खे ।। ३२ ।।

कर्णे च वदने घ्राणे तथा करतलेऽपि च ।
पादे पृष्ठे तथा नेत्रे न कुर्य्यादनुलेपनम् ।। ३३ ।।

कर्ण, वदन, नासिका, हथेली, चरणके नीचे पीठ और नेत्र इन स्थानोंमें गंधादि नहीं लगाना चाहिये ।। ३३ ।।

चक्षुर्लग्ने हतं श्रेयो मुखलग्ने धनक्षयः ।
दारिद्र्यं कण्ठलग्ने च पादपृष्ठे वयः क्षयः ।। ३४ ।।
करे च नासिकारन्ध्रे बुद्धिनाशोऽनुलेपनम् ।
तस्माद्विवर्जयेदेताननुलेपनभाजिनः ।। ३५ ।।

नेत्रमें लगानेसे श्रेष्ठताका विनाश, वदनमें लगानेसे धनका क्षय, कण्ठमें लगानेसे दरिद्र, चरण और पीठमें लगानेसे आयुका विनाश, हाथ और नासिकाके छिद्रोंमें लगानेसे बुद्धिका विनाश हो जाता है, इसलिये इन सब स्थानोंमें गन्धानुलेपन नहीं करना चाहिये ।। ३४ ।। ३५ ।।

गन्धं पुष्पं तथा तोयं रत्नं चैव महोदधिम् ।
गृहीतं प्रथमं वस्त्रं वर्जयेन्न कदाचन ।। ३६ ।।

गंध, पुष्प, जल, रत्न, महोदधि और वस्त्र स्वभावतः यदि प्राप्त हो जाय तो इनका परित्याग करना उचित नहीं है, परित्याग करनेसे उसी समय मैं क्रोधित हो जाती हूँ ।। ३६ ।।

अजारजः खररजस्तथा सम्मार्जनीरजः ।
स्त्रीणां पादरजो राजञ्छक्रादपि हरेच्छ्रियम् ।। ३७ ।।

जिस मनुष्यके शरीरमें बकरीके खुरोंकी धूरि, गधेके चरणकी धूरि, बुहारीकी धूरि और स्त्रियोंके चरणोंकी धूरिका स्पर्श हो जाता है, वह मनुष्य इन्द्रके समान हो तो भी हतश्री हो जाता है ।। ३७ ।।

कुचैलिनं दन्तमलप्रधारिणं बह्वाशिनं निष्ठुरवाक्यभाषिणम् ।
सूर्योदये चास्तमिते च शायिनं विमुञ्चति श्रीरपि चक्रपाणिनम् ॥३८

जो मनुष्य मैले वस्त्र धारण करता है, जो दाँत नहीं मांजता है, कठोर वाक्य प्रयोग करता है। जो मनुष्य बहुत भोजन करता है, और सूर्योदय होनेके समय अथवा अस्त होनेके समय शयन करता है, वह मनुष्य भगवानके समान क्यों न हो किन्तु उसे भी लक्ष्मी परित्याग कर देती है॥ ३८॥

नित्यं छेदस्तृणानां क्षितिनखलिखनं पादयोरल्पपूजा
दन्तानामल्पशौचं वसनमलिनात् रूक्षता मूर्द्धजानाम् ॥
द्वेसंध्ये चापि निद्रा विवसनशयनं ग्रासहासातिरेकः
स्वांगे पीठे वाद्यं च हरति धनपतेः केशवस्यापि लक्ष्मीम् ॥३९॥

निरन्तर हाथसे तृण तोडना, नाखूनसे भूमिमें लिखना, चरणका अशुद्ध रखना, दाँतोंको मैला रखना, वस्त्रोंको मैला रखना, बालोंको रूखा रखना, प्रातःकाल और संध्यासमय सोना, नग्न होकर सोना, भोजनके समय बड़े ग्रासका ग्रहण करना, जोरसे हँसना, अपने देह व आसनका बजाना, इन कार्यों के करनेसे चाहे धनपति कुबेर, अथवा केशव ही क्यों न हों उनकी भी लक्ष्मी नष्ट हो जाती है॥ ३९॥

एवं यः कुरुते नित्यं मयोक्तानि च केशव।
तुष्टा भवामि तस्याहं त्वय्येव निश्चला यथा॥ ४०॥

हे केशव ! मेरे कथनानुसार जो मनुष्य सदैव आचरण करता है, तो मैं जैसे आपमें निश्चल होकर स्थिर हूँ, इसीप्रकार उस मनुष्यमें भी अचल होकर वास करती हूँ और उससे निःसंदेह परम प्रसन्न रहती हूँ॥ ४०॥

श्रीभाषितमिदं स्तोत्रं प्रातरुत्थाय यः पठेत्।
तद्गृहं विपुलं रम्यं नित्यं भवति नान्यथा॥ ४१॥

जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर लक्ष्मीजीद्वारा कथित इस स्तोत्रका पाठ करता है, उसका गृह निरंतर विपुल ऐश्वर्यसमन्वित होकर परम शोभा धारण करता है॥ ४१॥

व्याधितो मुच्यते रोगाद्बद्धो मुच्येत बन्धनात् ।
आपदस्तस्य नश्यन्ति तमः सूर्योदये यथा ।। ४२ ।।

इस स्तवके पाठ करनेसे रोगी रोगसे छूट जाता है, बंदीका बंधन छूट जाता है। सूर्योदय होनेपर जिस प्रकार तिमिरराशिका नाश हो जाता हैं वैसेही विपत्तियोंके समूह ध्वंस हो जाते हैं ।। ४२ ।।

इति श्रीविष्णुपुराणे लक्ष्मीकेशवसंवादे पं० कन्हैयालालमिश्र-
कृतहिन्दीटीकासहिते लक्ष्मीचरित्रं समाप्तम्

इन्द्र उवाच

नमामि सर्व्वभूतानां जननीं पद्मसम्भवाम् ।
श्रियं मुनीन्द्रपद्माक्षीं विष्णोर्वक्षःस्थलस्थिताम् ।। १ ।।

देवराज इन्द्र सुरगुरु बृहस्पतिजीके शापसे विगतश्री हो लक्ष्मीजीकी आराधना में रत हो कहने लगे । जो संपूर्ण जीवगणोंकी माता कमलदल जिसका उत्पत्तिस्थान, जिनके नेत्र खिले हुए कमलके सदृश बड़े हैं और जो भगवान् विष्णुके हृदयमें निरंतर विराजमान रहती है । मैं उन्हीं लक्ष्मीदेवीको नमस्कार करता हूँ ।। १ ।।

त्वं सिद्धिस्त्वं स्वधा स्वाहा सुधा त्वं लोकपालिनी ।
सन्ध्या रात्रिः प्रभा भूमिर्मेधा श्रद्धा सरस्वती ।। २ ।।

हे देवी ! तुम्हीं सिद्धि, तुम्हीं स्वधा, तुम्हीं स्वाहा, तुम्हीं सुधा, तुम्हीं सन्ध्या, तुम्हीं रात्रि, तुम्हीं प्रभा, तुम्हीं भूमि, तुम्हीं बुद्धि, तुम्हीं श्रद्धा, तुम्हीं सरस्वती और तुम्हीं सबकी माता हो मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ ।। २ ।।

यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभने ।
आत्मविद्या च देवि त्वं विमुक्तिफलदायिनी ।। ३ ।।

हे शोभने ! तुम्हीं यज्ञविद्या, तुम्हीं महाविद्या, तुम्हीं गुप्तविद्या, तुम्हीं ब्रह्मविद्या और तुम्हीं एकमात्र मुक्तिकी देनेवाली हो । (तुमको वारंवार प्रणाम है) ।। ३ ।।

आन्वीक्षिकी त्रयी वार्त्ता दण्डनीतिस्त्वमेव च ।
सौम्या सौम्यैर्जगद्रूपैस्त्वयेदं देवि पूरितम् ॥ ४ ॥

हे देवि ! तुम्हीं तर्कविद्यारूपिणी, तुम्हीं सामआदि चारों वेदोंका स्वरूप, तुम्हीं दण्डनीतिस्वरूपिणी और तुम्हीं सौम्यरूपिणी अर्थात् मनोहरस्वरूप वाली हो । हे जननी । तुम्हारे अनेक रूपद्वाराही सम्पूर्ण विश्व व्याप्त है ॥४॥

का त्वन्या त्वामृते देवि सर्व्वयज्ञमयं वपुः ।
अध्यास्ते देवदेवस्य योगिचिन्त्यं गदाभृतः ॥ ५ ॥

देवाधिदेव गदाधर हरिका देह सर्वयज्ञमय है, जो एकमात्र योगी-गणोंके चिन्तनीय हैं, हे देवि ! तुम्हारे अतिरिक्त कौन स्त्री उस देहमें वास कर सकती है ॥ ५ ॥

त्वया देवि परित्यक्तं सकलं भुवनत्रयम् ।
विनष्टप्रायमभवत्त्वयेदानीं समेधितम् ॥ ६ ॥

हे देवि ! तुम पहले इस विश्वको परित्याग-करके समुद्रके भीतर प्रवेश कर गई थी, तब त्रिभुवन विनाशप्राय हो गया था, परन्तु तुमने फिर क्षीरसागरसे निकलकर इसकी रक्षा की है ॥ ६ ॥

दाराः पुत्रास्तथागारं सुहृद्धान्यद्धनादिकम् ।
भवत्येतन्महाभागे नित्यं त्वद्वीक्षणान्नृणाम् ॥ ७ ॥

हे महाभागे ! तुम्हारी कृपादृष्टि होने पर मनुष्य स्त्री, पुत्र, गृह, बन्धु, धन-धान्य सभी कुछ प्राप्त कर सकता है । अतः हम पर अपनी कृपादृष्टि करो ॥ ७ ॥

शरीरारोग्यमैश्वर्यमरिपक्षक्षयः सुखम् ।
देवि त्वद्दृष्टिदृष्टानां पुरुषाणां न दुर्लभम् ॥ ८ ॥

हे जननी ! तुम जिस मनुष्य पर कृपादृष्टि करती हो उसे आरोग्यता, ऐश्वर्य, शत्रुनाश और सुख, कुछ भी दुर्लभ नहीं है ॥ ८ ॥

त्वमंबा सर्व्वभूतानां देवदेवो हरिः पिता ।
त्वयैतद्विष्णुना चाम्ब जगद्व्याप्तं चराचरम् ॥ ९ ॥

हे मातः ! तुम संपूर्ण जीवोंकी माता और देवदेव हरि सबके पिता हैं । तुमसे और विष्णुसे यह चराचर जगत् व्याप्त है ॥ ९ ॥

मानं कोषं तथा कोष्ठं मा गृहं मा परिच्छदम् ।
मा शरीरं कलत्रञ्च त्यजेथाः सर्व्वपावनि ।। १० ।।
मापुत्रान्मासुहृद्वर्गान्मा पशून्मा विभूषणम् ।
त्यजेथा देवदेवस्य विष्णोर्व्वक्षः स्थलाश्रये ।। ११ ।।

हे हरिहृदयवासिनी ! तुम जिस मनुष्यका त्याग करती हो, उस मनुष्यकी मान्यता, सुख, कोष, परिधान, शरीर, स्त्री, पुत्र, सुहृत् (मित्र), पशु, और आभूषण सभी वस्तुएँ नष्ट हो जाती हैं ।। १० ।। ११ ।।

सत्येनाशौचसत्त्वाभ्यां तथा शीलादिभिर्गुणैः ।
त्यज्यन्ते ते नराः सद्यः सन्त्यक्ता ये त्वयामले ।। १२ ।।

हे विमले ! तुम जिसका त्याग करती हो, उसका सत्य, पवित्रता, बल, शील आदि सब नष्ट हो जाता है ।। १२ ।।

त्वयावलोकिताः सद्यः शीलाद्यैरखिलैर्गुणैः ।
कुलैश्वर्य्यैश्च युंज्यन्ते पुरुषा निर्गुणा अपि ।। १३ ।।

हे देवि ! तुम जिस पुरुषको कृपाकी दृष्टिसे देखती हो, गुणविहीन होने पर भी उसे शीघ्रही शीलादि गुण और ऐश्वर्य प्रात हो जाते हैं ।।१३।।

स श्लाघ्यः गुणी धन्यः स कुलीनः स बुद्धिमान् ।
स शूरः स च विक्रान्तो यस्त्वया देवि वीक्षितः ।। १४ ।।

हे देवि ! तुम जिसपर कृपादृष्टि करती हो, वही श्लाघायोग्य, वही गुणी, वही धन्य, वही कुलीन, वही बुद्धिमान्, वही शूर और वही विक्रमशाली कहा जाता है ।। १४ ।।

सद्यो वैगुण्यमायान्ति शीलाद्याः सकला गुणाः ।
पराङ्मुखी जगद्धात्री यस्य त्वं विष्णुवल्लभे ।। १५ ।।

हे विष्णुप्रिये ! तुम जगत्की माता हो, तुम जिससे विमुख होती हो, उसके शीलादि जितने सद्गुण हैं, शीघ्रही नष्ट हो जाते हैं ।। १५।।

न ते वर्णयितुं शक्ता गुणाञ्जिह्वा हि वेधसः ।
प्रसीद देवि पद्माक्षि मास्माँस्त्याक्षीः कदाचन ।। १६ ।।

हे कमललोचने ! ब्रह्माकी जिह्वा भी तुम्हारे गुण-कीर्त्तन में समर्थ नहीं है । हे जननी ! मुझ पर प्रसन्न हो, हमारा त्याग न करो ।। १६ ।।

पराशर उवाच

एवं श्रीः संस्तुता सम्यक्प्राह हृष्टा शतक्रतुम् ।
शृण्वतां देवदेवानां प्रादुर्भूता स्थिता द्विज ।। १७ ।।

पराशरजीने कहा कि हे ब्राह्मण ! जब इन्द्रने सब देवताओंके सामने इस प्रकार स्तुतिकी, तब सब प्राणियोंमें स्थित कमला (लक्ष्मी) ने प्रसन्न होकर कहा ।। १७ ।।

श्रीरुवाच

परितुष्टास्मि देवेश स्तोत्रेणानेन हेतुना ।
वरं वृणीष्व यस्त्विष्टो वरदाहं समागता ।। १८ ।।

लक्ष्मी बोली कि हे देवेश ! मैं तुम्हारे स्तवसे सन्तुष्ट होकर वरदान देनेके लिये आई हूँ। तुम अभिलषित वर माँगो ।। १८ ।।

वरदा यदि देवि त्वं वरार्हो यदि वाप्यहम् ।
त्रैलोक्यं न त्वया त्याज्यमेष मे ह्यर्थितो वरः ।। १९ ।।

इन्द्रने कहा कि हे देवि ! यदि हमारे ऊपर प्रसन्न हुई हो, यदि हमें वर देनेके योग्य पात्र समझा है, तो त्रिभुवनका परित्याग करके मत जाओ । हे जननी ! हमारा केवल यही प्रार्थनीय वर है ।। १९ ।।

स्तोत्रेण यस्तवैतेन त्वां स्तोष्यत्पद्मसम्भवे ।
स त्वया न परित्याज्यो द्वितीयस्तुवरो मम ।। २० ।।

हे सागरसम्भवे ! जो मनुष्य इस स्तवद्वारा तुम्हें प्रसन्न करे, तुम उसका त्याग न करो । हे जननी ! यह हमारी दूसरी प्रार्थना है ।। २० ।।

लक्ष्मीरुवाच

त्रैलोक्यं त्रिदशश्रेष्ठ सन्त्यजामि न वासव ।
दत्तो वरो मया त्वां तु स्तोत्रेणपरितुष्टया ।। २१ ।।

लक्ष्मी बोली कि हे त्रिदशनाथ ! मैं तुम्हारी स्तुति से परितुष्ट (संतुष्ट) कर वर देती हूँ, मैं त्रिभुवनका त्याग नहीं करूँगी ।। २१ ।।

यश्च सायं तथा प्रातः स्तोत्रेणानेन मानवः।
मां स्तोष्यति न तस्याहं भविष्यामि पराङ्मुखी ।। २२।।

जो मनुष्य प्रातःकाल और संध्यासमय इस स्तवका पाठ करके हमारी प्रीतिसाधन करेगा, मैं कभी उससे विमुख नहीं होऊँगी ।। २२ ।।

पराशर उवाच

एवं वरं ददौ देवी देवराजाय वै पुरा।
मैत्रेय श्रीर्महाभागा स्तोत्राराधनतोषिता ।। २३ ।।

पराशरजी बोले कि हे मैत्रेय ! पूर्वकालमें महाभागा लक्ष्मीने इस प्रकार स्तुति द्वारा आराधना करनेसे संतुष्ट होकर देवराज इन्द्रको वर दिया था ।। २३ ।।

भृगोर्वंशे समुत्पन्ना श्रीः पूर्व्वमुदधेः पुनः।
देवदानवयत्नेन प्रसूतामृतमन्थने ।। २४ ।।

देवी लक्ष्मीजीने पूर्वकालमें भृगुकुलमें जन्म ग्रहण किया था फिर किसी कारणसे वह देह त्याग कर दी। अनन्तर देवराज इन्द्रकी आराधनासे संतुष्ट होकर फिर देव असुरोंद्वारा सागर मथनेके समय समुद्रके भीतरसे उत्पन्न हुइं ।। २४ ।।

एवं यदा जगत्स्वामी देवदेवो जनार्दनः।
अवतारं करोत्येव तथा श्रीस्तत्सहायिनी ।। २५ ।।

जगत्पति देवदेव जनार्दन भगवान् जब जब अवतार लेते हैं, लक्ष्मी तब तब भी शरीर धारण करके पतिकी सहायिनी होती हैं ।। २५ ।।

पुनश्च पद्मादुद्भूता यदादित्योऽभवद्धरिः।
यदा च भार्गवो रामस्तदाभूद्धरणी त्वियम् ।। २६ ।।

जिस समय विष्णुने आदित्यावतार लिया, तब लक्ष्मी कमलसे उत्पन्न हुई, और जब हरि भृगुवंशमें परशुरामरूपसे अवतरे, उस समय लक्ष्मीदेवीने भी पृथ्वीका रूप धारण किया ।। २६ ।।

राघवत्वेऽभवत्सीता रुक्मिणी कृष्णजन्मनि।
अन्येषु चावतारेषु विष्णोरेषा सहायिनी ।। २७ ।।

रामावतारमें लक्ष्मीजी सीतारूपसे, कृष्णावतारमें रुक्मिणीरूपसे और अन्य अवतारोंमें अन्य अन्य रूप धारण करके पतिकी सहायिनी हुई ॥२७॥

देवत्वे देवदेहेयं मानवत्वे च मानवी।
विष्णोर्देहानुरूपां वै करोत्येषात्मनस्तनुम् ॥ २८ ॥

विष्णु जिससमय देवदेह धारण करते हैं, लक्ष्मी भी उस समय देवदेह धारण करतीं हैं, और जिस समय विष्णु मनुष्यदेह धारण करते हैं, लक्ष्मी भी उससमय मनुष्यरूपसे सहायिनी होती हैं । इस प्रकार लक्ष्मी विष्णुकी अनुपम अनुगामिनी होती हैं ॥ २८ ॥

यश्चैतच्छृणुयाज्जन्म लक्ष्म्याः स्तोत्रं पठेन्नरः।
श्रियो न विच्युतिस्तस्य गृहे यावत्कुलत्रयम् ॥ २९ ॥

जो मनुष्य लक्ष्मीजीके जन्मका वृत्तान्त श्रवण और इस देवीस्तोत्रक पाठ करता है उसके वंशमें तीन पीढ़ियोंतक लक्ष्मी विराजमान रहती है ॥१९॥

पठ्यते येषु गेहेषु सुभक्त्या श्रीस्तवो मुने।
अलक्ष्मीः कलहो बाधा न तेष्वास्ते कदाचन ॥ ३० ॥

जिन घरों में भक्तिपूर्वक इस स्तोत्र का पाठ होता रहता है, वहां कभी अलक्ष्मी, क्लेश, बाधा कुछभी विद्यमान नहीं रहती है ॥ ३० ॥

एतत्ते कथितं ब्रह्मन्यस्मात्त्वं परिपृच्छसि।
क्षीराब्धौ श्रीर्यथा जाता पूर्वं भृगुसुता सती ॥ ३१ ॥

हे ब्रह्मन् ! भृगुनंदिनी सती लक्ष्मीजीने जिसकारण क्षीरसागरसे फिर जन्म ग्रहण किया तुम्हारे पूछनेके अनुसार वह आदिसे अन्ततक मैंने सुना दिया ॥ ३१ ॥

इति सकलविभूत्यवाप्तिहेतुस्स्तुतिरियमिन्द्रमुखोद्गता हि लक्ष्म्याः।
अनुदिनमनुपठ्यते नृभिर्य्यैर्वसति न तेषु कदाचिदप्यलक्ष्मीः ॥ ३२॥

जो मनुष्य प्रतिदिन संपूर्ण विभूति प्राप्त होनेके कारण इन्द्रके मुखसे कहा हुआ लक्ष्मीस्तोत्रका पाठ करता है उसके गृहमें कभी लक्ष्मी का अभाव नहीं रहता है ॥ ३२ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पराशरमैत्रेयसंवादे पं० कन्हयालालमिश्र-
हिन्दीटीकासहिते लक्ष्मीस्तोत्रं समाप्तम्

श्रीसूक्तम्

त्वं श्रीरुपेन्द्रसदने मदनैकमाता
ज्योत्स्नासि चन्द्रमसि चन्द्रमनोहरास्ये ।।
सूर्ये प्रभासितजगत्त्रितये प्रभासि
लक्ष्मि प्रसीद सततं नमतां शरण्ये ।। १ ।।

हे लक्ष्मी ! तुम उपेन्द्रके गृहमें श्रीस्वरूपिणी हो। हे मदनजननि तुम चन्द्रमंडलमें चांदनीस्वरूप हो, हे विधुवदने ! सूर्यमंडलमें प्रभास्वरूप और त्रिभुवनमें भी प्रभास्वरूपिणी हो, हे शरण्ये ! जो लोग तुमको सदा प्रणाम करें उन पर प्रसन्न हो ।। १ ।।

त्वं जातवेदसि सदा दहनात्मशक्ति-
र्वेधास्त्वया जगदिदं विविधं विदध्यात् ।
विश्वम्भरोऽपि बिभृयादखिलं भवत्या
लक्ष्मि प्रसीद सततं नमतां शरण्ये ।। २ ।।

हे भगवती ! तुम अग्निमें जलानेवाली शक्तिस्वरूपिणी हो, तुम्हारी सहायताके बलसेही ब्रह्मा संसारकी होनहार बातोंको लिखता है, स्वयं विश्वम्भरभी तुम्हारी ही सहायता से जगत्‌की रक्षा करते हैं। हे देवि ! जो लोग सदा तुम्हारे चरणोंमें प्रणाम करते हैं, उन पर प्रसन्न हो ।। २ ।।

हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।
चन्द्रां हिरण्मयींलक्ष्मीं जातवेदो ममावह ।। ३ ।।

हे अग्ने ! जिनका वर्ण सुवर्णके समान उज्ज्वल है जो हरिणीके समान रूपवाली हैं, जिनके कंठमें सुवर्ण और चाँदीके फूलोंकी माला शोभा पाती है, जो चन्द्रमाके समान प्रकाशमान हैं, जिनकी माला देह सुवर्णमय है उन्हीं लक्ष्मीदेवीका हमारे निमित्त आवाहन करो। हे हुताशन ! तुम्हीं देवताओंके होता हो, लक्ष्मीदेवीको आवाहन करके बुलानेमें केवल तुम्हारी-ही सामर्थ्य है ।। ३ ।।

तां म आवह जातवेदोलक्ष्मीमनपगामिनीम् ।।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ।। ४ ।।

हे अग्ने ! जिनके प्रसन्न होकर आनेसे सुवर्ण, भूमि, अश्व (घोडा) पुत्रपौत्रादि सब कुछ प्राप्त हो जाता है; उन्हीं अनुगामिनी (उन्हींके पीछे जानेवाली) लक्ष्मी को हमारे लिये आवाहन करो ।। ४ ।।

अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ।। ५ ।।

घोडे जिसके आगे चलते हैं, संपूर्ण रथ जिसके मध्यमें स्थित हैं, जो हाथियोंकी चिग्घाड़से सबको जगाती है, जो एकमात्र देवी और आश्रय है उन्हीं लक्ष्मीका आवाहन करता हूं वह आकर हमारी सेवाको स्वीकार करे ।। ५ ।।

कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्।
पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ।। ६ ।।

जिनका शरीर विकसित कमलके समान हँसता हुआ विराजित है, जिनका वर्ण सुवर्णके समान सुन्दर है, जो क्षीरसागरके निकलनेसे सदा गीली है, जिनकी सदा उज्ज्वलकांति है, सदा परितृप्त और जो प्रसन्न हो मनोरथ देकर आश्रितभक्त जनोंको तृप्त करती है, जो कमलके आसनपर विराजमान और कमलके समान वर्णवाली हैं, मैं उन्हीं श्रीलक्ष्मीदेवीका आवाहन करता हूँ ।। ६ ।।

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।।
तां पद्मिनीमीं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमि ।।७।

जो चंद्रमाके समान प्रभायुक्त है, जो परम दीप्तिमान है, जो यशके समूहसे प्रकाशमान है, सुरपुरमें सदा देवता लोग जिसकी आराधना करते हैं, जो उदारचित्तवाली है, जो कमलकके समान रूपवाली और ईकारस्वरूपिणी है, मैं उन्हीं लक्ष्मीदेवीकी शरण होता हूँ। हे देवि ! मैं तुम्हें प्रणाम कर प्रार्थना करता हूँ कि तुम हमारी दरिद्रता को दूर करो ।।७।।

आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तववृक्षोऽथ बिल्वः ।।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तुमायाऽन्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः ।।८।।

हे देवि ! तुम्हारा वर्ण सूर्यके समान उज्ज्वल है तुम्हारी तपस्याके प्रभावसे ही फलवान् बिल्ववृक्षादि उत्पन्न होते हैं। हे शरण्ये ! उन्हीं बिल्व-

वृक्षोंके पके हुए फलसमूह हमारे अन्तस्थ और बाहरकी अलक्ष्मीको दूर करें ।। ८ ।।

उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतः सुराष्ट्रेऽस्मिन्कीर्तिमृद्धि ददातु मे ।। ९ ।।

हे देवि ! तुम्हारे अनुग्रहसे शिवका मित्र कुबेर और कीर्ति देवी मणि-रत्नादिसहित हमारे निकट उपस्थित हों, मैंने इस संसारमें देह धारण किया है, वहाँ आकर हमें कीर्ति और ऋद्धि प्रदान करें ।। ९ ।।

क्षुत्पिपासामला ज्येष्ठाअलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम् ।
अभूतिमसमृद्धिञ्च सर्व्वां निर्णुद मे गृहात् ।। १० ।।

मैं क्षुधा और तृष्णासे मलपरिपूर्ण अलक्ष्मीका विनाश करूँगा । हे देवि ! तुम हमारे गृहसे संपूर्ण अभूतिको और असमृद्धिको दूर करो ।। १० ।।

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्व्वभूतानां त्वामिहोपह्वये श्रियम् ।। ११ ।।

गंधही जिसका लक्षण है, जिसको कोई भी परास्त करनेमें समर्थ नहीं है, जो सदा गौ इत्यादि पशुओंसे युक्त है, जो संपूर्ण जीवोंकी ईश्वरी है मैं उन्हीं लक्ष्मीदेवीका आवाहन करता हूँ ।। ११ ।।

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीःश्रयतां यशः ।। १२ ।।

हे देवि । प्रसन्न होकर आशीर्वाद दो, तुम्हारे प्रसादसे हमारा मनोरथ पूर्ण हो, संकल्प सिद्ध हो, सदा सत्यवचन बोलनेमें बुद्धि रहे, मुझे गायका दूध बहुत-सा प्राप्त हो, चारों ओर हमारे गृहमें आवश्यकतानुसार अन्न विद्यमान रहे और समृद्धि व यश सदा मेरा आश्रय करे ।। १२ ।।

कर्द्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भव कर्द्दम ।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ।। १३ ।।

कर्दमजीसे ही संपूर्ण प्रजा उत्पन्न हुई है । इस कारण हे कर्दम ! तुम हमारे स्थानमें स्थिति करो और अपनी जननी पद्ममालिनी लक्ष्मी देवीको हमारे वंशमें स्थापित करो ।। १३ ।।

आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लित वस मे गृहे ।।

निजदेवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ।। १४ ।।

हे कर्दम ! जलदेवतागण चिकना द्रव्य उत्पन्न करें, तुम सदा मेरे स्थानमें स्थित रहो और अपनी जननी लक्ष्मीदेवीको हमारे कुल में स्थापित करो ।।१४।।

आर्द्रां यः करणीं यष्टिपिंगलांपद्ममालिनीम् ।

चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मींजातवेदोमआवह ।। १५ ।।

हे अग्ने ! जो गीले देहवाली है, जिनके हाथमें शोभायमान यष्टि (लकड़ी) विराजमान है, जो पुष्टियुक्त है, जो पीलेवर्णवाली है, जो पद्म-चारिणी, पद्ममालिनी और जिनका वर्ण सुवर्णके समान देदीप्यमान है, उन्हीं लक्ष्मीदेवीका हमारे लिये यहाँ आवाहन करो ।। १५ ।।

आर्द्रां यः करणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।

सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।। १६ ।।

हे अनल ! जो गीले देहवाली है, जिनके हाथमें शोभायमान यष्टि विराजमान है, जो सुवर्णके समान वर्णवाली और हेमामालिनी है, जिनकी कान्ति सूर्यके समान देदीप्यमान है, उन्हीं लक्ष्मी देवीका हमारे निमित्त यहाँ आवाहन करो ।। १६ ।।

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।

यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम् ।।१७।।

हे अग्ने ! जिसकी अनुग्रहसे बहुतसा सुवर्ण, गौ, अश्व, दास-दासी, पुत्र, पौत्र, इत्यादि प्राप्त कर सकें, तुम उन्हीं अनपगामिनी लक्ष्मी देवीका हमारे निमित्त यहाँ आवाहन करो ।। १७ ।।

लक्ष्मीचरित्रम्

कैलासशिखरे रम्ये नानारत्नविमण्डिते ।
नानावृक्षलताकीर्णे विहंगगणशोभिते ।। १ ।।
नानाकुसुमगुल्मैश्च वेष्टिते च गणावृते ।
देवदानवगन्धर्व्यकिन्नरैरुपशोभिते ।। २ ।।

मन्दमारुतसंवीते पार्व्वतीपरमेश्वरौ ।
समासीनौ कथां चक्राते तौ नित्यमुदान्वितौ ।
भक्त्यादेवं प्रणम्याथ पार्व्वती परिपृच्छति ।। ३ ।।

जो स्थान विविध रत्नोंके समूहोंसे विभूषित है, अनेक प्रकारके वृक्ष और लता जिसको चारों ओरसे घेरे रहते हैं, जहाँ विहंग गण सदा कूजन करके अपूर्व श्री सम्पादन करते हैं, अनेक प्रकारके पुष्प और गुल्मादिसे जो स्थान शोभित है, जिस स्थानमें देव, दानव, गंधर्व, किन्नर और प्रमथगण सदा वास करते हैं, जिस स्थानमें पवन मंद-मन्द चलकर अधिष्ठाताओंके आनन्दको बढ़ाता है। किसी समय इसी रमणीय कैलास पर्वतके शिखरपर पार्वती और परमेश्वर (महादेव) प्रमुदित चित्तसे रत्नसिंहासन पर विराजमान अनेक प्रकारके कथाप्रसंगसे समय व्यतीत करते थे। प्रसंग वशात् गौरीने भक्तिपूर्वक पतिके चरणोंमें प्रणाम करके पूछा ।। १ ।। २ ।। ३ ।।

श्रीपार्व्वत्युवाच

देवदेव महेशान सर्वागमविशारद ।
त्वमेव शरणं देव लोकानां दुःखनाशनः ।। ४ ।।

श्रीपार्वतीजी बोलीं कि हे देवदेव ! आप संपूर्ण शास्त्रके पारदर्शी हो, सबके आश्रय और तुम्हारे ही अनुग्रहसे प्राणी दुःखरूपी समुद्रसे छुटकारा पाता है ।। ४ ।।

कमलायाश्च माहात्म्यं ब्रूहि मे प्रमथाधिप ।
केनोपायेन देवी तु गृहे भवति सुस्थिरा ।। ५ ।।

हे प्रमथाधिप ! लक्ष्मीदेवीका माहात्म्य हमें सुनाइये कि किस प्रकारके कार्यका अनुष्ठान करनेसे कमला मनुंष्योंके घरमें अचल होकर वास करती है ? मैं उसे श्रवण करने की अभिलाषा करती हूँ ।। ५ ।।

श्रीशिव उवाच

साधुसाधु महाभागे यत्त्वया परिपृच्छ्यते ।
सारात्सारतरं लोके गुह्याद्गुह्यतरं महत् ।। ६ ।।

सर्व्वपापहरं पुण्यं सर्व्वदेवनमस्कृतम् ।
सर्व्वमन्त्रमयं साक्षात्सर्व्वयज्ञफलप्रदम् ।। ७ ।।
चिंतनीयं प्रयत्नेन पठनीयं प्रयत्नतः ।
विना जपेन होमेन विना ध्यानेन तापसा ।।
फलञ्चलभते मर्त्यो लक्ष्मीमाहात्म्यकीर्त्तनात् ।। ८ ।।

श्री महादेवजी बोले कि हे महाभागे ! हे कल्याणि ! तुम्हारा प्रश्न सुननेसे संतुष्ट हो मैं शतशत धन्यवाद देता हूँ । तुमने जो विषय पूछा है, वह सारसे भी सारतर और गुह्य होने पर भी गुह्यतर है । लक्ष्मी माहात्म्यके सुननेसे संपूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं, यह परम पवित्र और सर्वदेववंदनीय है । यह सर्व मंत्रमय है और इससे सब यज्ञोंका फल मिलता है, यत्नसहित इसका पाठ करना और ध्यान करना सर्वथा उचित है । लक्ष्मीमाहात्म्यका कीर्त्तन करनेसे अथवा इसका मर्म जानलेनेसे जो महान्फल प्रात होता है, वह जप, होम, ध्यान, तपस्या आदि से भी नहीं प्राप्त होता है ।। ६ ।। ७ ।।८।।

प्राणस्वरूपमेतत्तु न कस्मैचित्प्रकाशितम् ।
तव स्नेहान्महादेवि कथयामि समासतः ।। ९ ।।

हे देवि ! यह लक्ष्मीतत्त्व मेरे प्राणस्वरूप है, अभी तक मैंने किसी से नहीं कहा है केवल तुम्हारे प्रति प्रीतिके वश होकर कहता हूँ ।। ९ ।।

श्रीशिव उवाच

तप्तकाञ्चनवर्णाङ्गीं रामां राजीवलोचनाम् ।
नानालंकारभूषाढ्यां रामस्य वामतःस्थिताम् ।।१०।।
चिन्तामणिगृहे रत्नसिंहासनस्थितां सतीम् ।
एवं संचिन्तयेद्यस्तु स भवेत्कमलाप्रियः ।। ११ ।।

श्रीमहादेवजी कहने लगे कि, हे देवि ! जिसका वर्ण तपे सुवर्णके समान है, जिसकी कान्ति मनोहर है, जिसके नेत्र कमलदलके समान हैं, जो अनेक प्रकारके अलंकारोंसे भूषित हैं, जो चिन्तामणिके गृहमें रघुनाथजीके बाँई ओर रत्नसिंहासनपर स्थित रहती हैं, जो मनुष्य इन पतिपरायणा

लक्ष्मीजीका ध्यान करता है, वह निःसंदेह कमलाका प्रियपात्र होता है ।। १० ।। ११ ।।

सदाचारता यत्र आस्तिका मानवास्तथा ।
न विरोधो गृहे यत्र तत्र लक्ष्मीर्वसेद्ध्रुवम् ।। १२ ।।

हे देवि ! जिस घरके गृहस्थीलोग निरन्तर सदाचार करते हैं । नास्तिकता जिन लोगोंके शरीरमें आश्रय नहीं पाती और विरोधका जिस गृहमें लेशमात्र भी नहीं है । लक्ष्मी सर्वदा वहाँ निवास करती है ।। १२ ।।

योऽधर्मञ्च परित्यज्य धर्म्मञ्चापि निषेवते ।
कमला निश्चला तस्मिन्सत्यंसत्यं हि पार्व्वति ।। १३ ।।

हे पार्वती ! जो मनुष्य अधर्मका परित्याग करके धर्मानुष्ठानमें प्रवृत्त होता है, मैं सत्य कहता हूँ, उसके गृहमें लक्ष्मी निश्चल होकर निवास करती है ।। १३ ।।

अतिथेः सेवको यश्च ज्ञानयज्ञतपोरतः ।
कमला निश्चला तस्य सत्यं सत्यं वदामि ते ।। १४ ।।

हे पार्वती ? जो मनुष्य अतिथिका सत्कार करता है, यज्ञ और तपतपस्या संलग्न रहता है, मैं सत्य सत्य कहता हूँ, उसी पुरुषमें लक्ष्मी निश्चल होकर वास करती है ।। १४ ।।

पतिपरायणा यत्र यत्र नारी सुरूपिणी ।
गेहिणी धर्म्मिणी यत्र तत्र लक्ष्मीर्विराजते ।। १५ ।।

जिस गृहकी स्त्री पतिपरायणा, परमरूपवती, और परम धर्मशीला हैं, लक्ष्मी उसी गृहमें निरन्तर विराजमान रहती है ।। १५ ।।

केशसंस्करणञ्चैव आदर्शे मुखदर्शनम् ।
देवानाञ्च पितृणाञ्च तर्पणं दन्तधावनम् ।। १६ ।।
दिवसस्याग्रभागे तु न कुर्य्याद्यो हि मानवः ।
तं दृष्ट्वा कमला क्षिप्तं दूरतः परिवर्ज्जयेत् ।। १७ ।।

जो मनुष्य बालों का संवारना, शीशेमें मुख देखना, देवता और पितृगणोंका तर्पण करना, दातून करना, इन कार्योंको दिनके पहले भागमें समाप्त न करके अनवसरमें करता है, उस निन्दितको देखतेही लक्ष्मी चंचल होती है और उसको छोड़कर चली जाती है ।। १६ ।। १७ ।।

ग्रामे तीर्थे तथा क्षेत्रे तथान्यपथि मध्यतः ।
मलमूत्रपरित्यागी अलक्ष्म्याः स प्रियः सुतः ।। १८ ।।

ग्राम, तीर्थ, क्षेत्र, अथवा मार्गमें मल, मूत्रका परित्याग करनेवालेका लक्ष्मी त्याग करती है उसे अलक्ष्मीका प्रियपुत्र जानो ।। १८ ।।

मलं मूत्रं तथा केशं कपालं भस्म चैव हि ।
न पादेन स्पृशेद्यो हि लक्ष्मीं समभिकांक्षति ।। १९ ।।

जो मनुष्य लक्ष्मी की कामना करे, वह कभी भी मल, मूत्र, केश, अस्थि, भस्म आदि को पैरसे न स्पर्श करे ।। १९ ।।

नग्नो भूत्वा न च स्नाति न च शेते उलङ्गकः ।
लक्ष्मीविराजते तस्मिन्सत्यं ब्रूमि हि शङ्करि ।। २० ।।

हे शंकरि ! जो मनुष्य नंगा होकर स्नान नहीं करता है, नंगा होकर सोता नहीं है, मैं सत्य कहता हूँ कि लक्ष्मी उस पुरुषमें निरन्तर विराजमान रहती है ।। २० ।।

दशाहीनं तथा च्छिन्नं वस्त्रं मलिनदूषितम् ।
घृणया त्यज्यते येन स भवेत्कमलाप्रियः ।। २१ ।।

जो मनुष्य दशाहीन, छिन्न और मैले वस्त्रको घृणापूर्वक त्याग करता है, वह निःसन्देह लक्ष्मीका प्रियपात्र होता है ।। २१ ।।

इति श्रीरुद्रयामले शिवगौरीसंवादे पं० कन्हैयालालमिश्रकृतहिन्दीटीकासहितकमलाप्रीतिसाधनं नाम लक्ष्मीचरित्रं समाप्तम् ।

श्रीशंकर उवाच

अथातः संप्रवक्ष्यामि लक्ष्मीस्तोत्रमनुत्तमम् ।
पठनाच्छ्रवणाद्यस्य वरो मोक्षमवाप्नुयात् ।। १ ।।
गुह्याद्गुह्यतरं पुण्यं सर्व्वदेवनमस्कृतम् ।
सर्व्वमंत्रमयं साक्षाच्छृणु पर्व्वतनन्दिनि ।। २ ।।

श्रीमहादेवजी बोले कि, हे पार्वती ! अब मैं अत्युत्तम लक्ष्मीस्तोत्रका वर्णन करता हूँ, तुम श्रवण करो । इसको श्रवण करनेसे अथवा पढ़नेसे मनुष्य-

मुक्ति प्राप्त करता है। यह गुप्तसेभी गुप्ततर है सर्वदेव बंदनीय और सर्वमंत्र-मय है ॥ १ ॥ २ ॥

अनन्तरूपिणीं लक्ष्मीमपारगुणसागरीम् ।
अणिमादिसिद्धिदात्रीं शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ३ ॥

हे देवि लक्ष्मी ! तुम अनन्तरूपिणी हो, तुम गुणोंकी सागरस्वरूप हो और प्रसन्न होकर अणिमादिक सिद्धियाँ देती हो । तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ३ ॥

आपदुद्धारिणी त्वं हि आद्या शक्तिः शुभा परा ।
आद्या आनंददात्री च शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ४ ॥

हे देवि ! तुम प्रसन्न होकर प्रणत जनको विपदसे उद्धार करती हो, तुम्हीं कल्याणी व आद्यापराशक्ति हो, तुम्हीं सबसे आदि और तुम्हीं आनंदकी देनेवाली हो, तुम्हें मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ ॥ ४ ॥

इन्दुमुखी इष्टदात्री इष्टमन्त्रस्वरूपिणी ॥
इच्छामयी जगन्मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥

हे देवि जगन्मातः लक्ष्मी ! तुम्हीं मनवांछित अभिलाषाको देती हो, तुम्हारा शरीर पूर्ण चन्द्रके समान प्रकाशित है, तुम इष्टमंत्रस्वरूपिणी और इच्छामयी हो। तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ५ ॥

उमा उमापतेस्त्वन्त उत्कण्ठाकुलनाशिनी ।
उर्व्वीश्वरि जगन्मातर्लक्ष्मि देवि नमोस्तु ते ॥ ६ ॥

हे देवि लक्ष्मी ! तुम्हीं उमापतिकी उमा उत्कंठित मनुष्यकी उत्कण्ठाका नाश करती और पृथ्वीकी ईश्वरी हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ ६ ॥

ऐरावतपतेः पूज्या ऐश्वर्य्याणां प्रदायिनी ।
औदार्य्यगुणसम्पन्ना लक्ष्मि देवि नमोस्तुते ॥ ७ ॥

हे देवि ! तुम ऐरावतपर सवार होनेवाले देवराज इन्द्रसे पूजित हो । तुम प्रसन्न होकर संपूर्ण ऐश्वर्य दे सकती हो और उदार गुणसे विभूषित हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ ७ ॥

कृष्णवक्षः स्थिता देवि कलिकल्मषनाशिनी ।
कृष्णचित्तहरा कर्त्रि शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ८ ॥

हे कमले ? तुम सदा श्रीकृष्णके वक्ष:स्थलमें स्थित रहती हो । तुम्हारे अतिरिक्त और कोई भी कलिकलमष (पाप) को नाश करने के लिए समर्थ नहीं है । तुमने श्रीकृष्णका चित्त चुरा लिया है । अतएव तुम्हीं सर्वकर्त्री अर्थात् सब कुछ करनेवाली हो, तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ८ ॥

कन्दर्पदमना देवि कल्याणी कमलानना ।
करुणार्णवसम्पूर्णा शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ९ ॥

हे देवि । तुमनेही कामदेवका गर्व हरण किया था, कल्याणमयी हो, तुम्हारा मुखारविन्द कमलके समान मनोहर है और करुणाकी सागर तुम्हीं हो । मं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ९ ॥

खञ्जनाक्षी खगनासा देवि खेदविनाशिनी ।
खञ्जरीटगतिश्चैव शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ १० ॥

हे देवि ! तुम खञ्जन के समान नेत्रवाली हो, तुम्हारी नासिका गरुड जीकी नासिकाके समान मनोहर है, तुम आश्रित जनोंका खेद विनाश करती हो, तुम खंजरीटके समान मंद गतिसे चलनेवाली हो, मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ १० ॥

गोविन्दवल्लभा देवि गन्धर्व्वकुलपावनी ।
गोलोकवासिनीमातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ११ ॥

हे जननि ! तुम वैकुण्ठनाथ गोविन्दकी प्यारी हो, तुम्हारे ही अनुग्रहसे गन्धर्व कुल पवित्र हुआ है, तुम सदा गोलोकमें विहार करती हो, मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ११ ॥

ज्ञानदा गुणदा देवि गुणाध्यक्षा गुणाकरी ।
गन्धपुष्पधरा मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ १२ ॥

हे देवि ! हे मातः ! केवल तुम्हीं ज्ञानकी देनेवाली और गुणकी देनेवाली हो । तुम्हीं गुणोंकी अध्यक्षा और गुणोंकी खानि हो । तुम गन्ध-पुष्प से सदा शोभित रहती हो । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ १२ ॥

घनश्यामप्रिया देवि घोरसंसारतारिणी ।
घोरपापहरा चैव शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। १३ ।।

हे कमले ! तुम घनश्याम हरिकी प्रिया हो, केवल तुम्हीं घोर संसार-सागरसे उद्धार कर सकती हो, और भयंकर पापको हरण करती हो । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। १३ ।।

चतुर्वेदमयी चिन्त्या चित्तचैतन्यदायिनी ।
चतुराननपूज्या च शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। १४ ।।

हे लक्ष्मी ! तुम चतुर्वेदमयी हो, योगीजनों की चिन्तनीय हो । तुम्हारे प्रसादसे ही चित्तमें चैतन्यताका संचार होता है । जगत्पति ब्रह्माजी भी तुम्हारी पूजा करते हैं । इसलिये हे जननि ! मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। १४ ।।

चैतन्यरूपिणी देवि चन्द्रकोटिसमप्रभा ।
चन्द्रार्कनखरज्योतिर्लक्ष्मीदेवि नमाम्यहम् ।। १५ ।।

हे देवि ! तुम चैतन्यरूपिणी हो, तुम्हारे देहकी कांति करोड़ों चंद्रमाके समान मनोहर है । तुम्हारे हाथ पैरोंके उंगलियों के नखकी दीप्ति चन्द्रसूर्यकी प्रभासे भी अधिक देदीप्यमान है । मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ ।। १५ ।।

चपला चतुराध्यक्षा चरमे गतिदायिनी ।
चराचरेश्वरी लक्ष्मि शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। १६ ।।

हे लक्ष्मीदेवी ! तुम सदा एक स्थानमें स्थित नहीं रहती हो अतः तुम चपला नामसे प्रसिद्ध हो, अन्तकालमें तुम्हीं गति देनेवाली और तुम्ही संपूर्ण जीवोंकी अधीश्वरी हो, देवि ! मैं तुमको नत मस्तक होकर प्रणाम करता हूँ ।। १६ ।।

छत्रचामरयुक्ता च छलचातुर्य्यनाशिनी ।
छिद्रौघहारिणी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। १७ ।।

हे जननि ! तुम छत्र और चमरसे अत्यन्त शोभा पाती हो, छल-चातुर्य्य (चतुराई) सब तुम्हारे प्रभावसे नष्ट हो जाते हैं । तुम पापसमूहोंको ध्वंस करती हो इसलिये मैं नत मस्तक हो तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। १७ ।।

जगन्माता जगत्कर्त्री जगदाधाररूपिणी ।
जयप्रदा जानकी च शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। १८ ।।

हे जननि ! तुम जगत्‌की माता हो, तुम्हीं जगत् की स्रष्टा और जगत्‌की आधार हो । जय देनेवाली और तुम्हीं जानकीरूपसे पृथ्वीपर अवतीर्ण हुई हो । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। १८ ।।

जनकीशप्रिया त्वं हि जनकोत्सवदायिनी ।
जीवात्मनी च त्वं मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। १९ ।।

हे जननि ! तुम्हीं जानकीपति रामचन्द्रकी प्रिया हो, तुम्हीं राजा जनकको आनन्द देनेवाली और संपूर्ण जीवोंकी आत्मास्वरूप हो, मैं नत मस्तक तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। १९ ।।

झिञ्जीरवस्वना देवि झञ्जावातनिवारिणी ।
झर्झरप्रियवाद्या च शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। २० ।।

हे देवि ! तुम्हारे कण्ठका स्वर झंझापवनके समान है । तुम्हारे अनुग्रह से ही मनुष्य झंझा वायुसे उद्धार पा सकता है ! तुम्हीं गोवर्द्धनादि पर्वतोंमें झर्झरवाजे जो वजते हैं, उनमें अनुराग स्वरूप हो । मैं शिर झुकाकर तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। २० ।।

टङ्ककदायिनी त्वं हि त्वञ्च ठक्काररूपिणी ।
ढक्कादिवाद्यप्रणया डम्फवाद्यविनोदिनी ।
डमरुप्रणया मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। २१ ।।

हे जननि ! केवल तुम्हीं अर्थ देती हो, तुम्हीं ठकाररूपिणी (चन्द्र-मंडलस्वरूपणी) हो, डमरू, डफले और पखावजादि बाजोंसे तुम प्रसन्न होती हो । मैं तुम्हारे चरणकमलोंमें प्रणाम करता हूँ ।। २१ ।।

तप्तकाञ्चनवर्णाभा त्रैलोक्यलोकतारिणी ।
त्रिलोकजननी लक्ष्मि शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। २२ ।।

हे देवि ! तुम्हारा वर्ण तपे हुए सुवर्णके समान सुन्दर है, तुम त्रिलोककी माता हो, मैं नतमस्तक होकर तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। २२ ।।

त्रैलोक्यसुंदरी त्वं हि तापत्रयनिवारिणी ।
त्रिगुणधारिणी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। २३ ।।

हे जननि ! तुम त्रिभुवनमें परमरूपवती हो, तुम्हीं तीनों तापोंका नाश करती हो, तुम्हीं सत्त्व, रज और तमोगुणको धारण करनेवाली हो । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। २३ ।।

त्रैलोक्यमङ्गला त्वं हि तीर्थमूलपदद्वया ।
त्रिकालज्ञा त्राणकर्त्री शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। २४ ।।

हे देवि ! तुम त्रिभुवनका मंगल करनेवाली हो, तुम्हारे चरणयुगलमें ही संपूर्ण तीर्थ विराजमान हैं, तुम भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों कालको जाननेवाली और तुम्हीं जीवोंकी रक्षा करनेवाली हो । मैं नत मस्तक होकर तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। २४ ।।

दुर्गतिनाशिनी त्वं हि दारिद्र्यापद्विनाशिनी ।
द्वारकावासिनी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। २५ ।।

हे मातः ! तुम आपत्तिमें फँसे जनोंकी दुर्गतिको और दरिद्री मनुष्यकी दरिद्रताको दूर करती हो, तुम द्वारका पुरीमें विराजमान रहती हो, मैं नत मस्तकसे प्रणाम करता हूँ ।। २५ ।।

देवतानां दुराराध्या दुःखशोकविनाशिनी ।
दिव्याभरणभूषांगी शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। २६ ।।

हे देवि ! देवतालोग भी बड़ी आराधना द्वारा महान् कष्टसे तुम्हें प्राप्त किए हैं, तुम प्रसन्न होकर शोक-दुःखका नाश करती हो और दिव्याभूषणोंसे परम शोभायमान हो। मैं नत मस्तक होकर तुम्हें प्रणाम करता हूँ।।२६।।

दामोदरप्रियां त्वं हि दिव्ययोगप्रदर्शिनी ।
दयामयी दयाध्यक्षी शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। २७ ।।

हे जननि ! तुम दामोदरकी प्रिया हो, तुम्हारे प्रसादसे ही दिव्ययोग प्राप्त किया जाता है, तुम दयामयी और दयाकी अध्यक्षा हो। मैं नत मस्तक होकर प्रणाम करता हूँ ।। २७ ।।

ध्यानातीता धराध्यक्षी धनधान्यप्रदायिनी ।
धर्मदा धैर्य्यदा मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। २८ ।।

हे मातः! तुम ध्यानसे परे, पृथ्वीकी अध्यक्षा हो, तुम्हीं भक्तजनको धन-धान्य देती हो तुम धर्म और धैर्यकी देनेवाली हो। मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ २८ ॥

नवगोरोचना गौरी नन्दनन्दनगेहिनी।
नवयौवनचार्व्वंगी शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ २९ ॥

तुम नये गोरोचनके समान गौरवर्णवाली हो, तुम नन्दनन्दन वज्रेश्वरकी प्यारी स्त्री हो, तुम यौवनके होनेसे अत्यन्त कान्तिवाली हो। मैं तुम्हें मस्तक नवाकर प्रणाम करता हूँ ॥ २९ ॥

नानारत्नादिभूषाढ्या नानारत्नप्रदायिनी।
नितम्बिनी नलिनाक्षीलक्ष्मीदेवि नमोऽस्तुते ॥ ३० ॥

हे लक्ष्मी! तुम अनेक रत्नादि भूषणोंसे विभूषित होकर परम शोभा पाती हो, तुम प्रसन्न होकर विविध रत्नोंको देती हो, तुम बड़े नितम्बोंवाली और कमल नयनी हो। मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ ॥ ३० ॥

निधुवनप्रेमानन्दा निराश्रयगतिप्रदा।
निर्विकारा नित्यरूपा लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ॥ ३१ ॥

हे देवि लक्ष्मी! तुम विकाररहित और नित्यरूपिणी हो, निधुवनमें विहार करनेसे तुम्हें परमानन्द प्राप्त होता है। तुम निराश्रय लोगोंको गति देनेवाली हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ ३१ ॥

पूर्णानन्दमयी त्वं हि पूर्णब्रह्मसनातनी।
पराशक्तिः पराभक्तिर्लक्ष्मीदेवि नमोऽस्तुते ॥ ३२ ॥

हे लक्ष्मीदेवि! तुम पूर्णानन्दमयी और तुम्हीं पूर्णब्रह्मरूपिणी हो। तुम्हीं परमशक्ति और तुम्हीं परमभक्तिस्वरूपा हो। तुम्हें नमस्कार है ॥ ३२ ॥

पूर्णचन्द्रमुखी त्वं हि परानन्दप्रदायिनी।
परमार्थप्रदा लक्ष्मि शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ३३ ॥

हे लक्ष्मी! तुम्हारा मुखारविन्द पूर्ण चंद्रमाके समान शोभायमान है, तुम परम आनन्द और परमार्थकी देनेवाली हो। मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ३३ ॥

पुण्डरीकाक्षिणी त्वं हि पुण्डरीकाक्षगेहिनी।
पद्मरागधरा त्वं हि शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ३४ ॥

हे जननि ! तुम्हारे नेत्र कमलके समान और तुम पुण्डरीकाक्ष (कमलदलके समान नेत्रवाले) हरिकी गेहिनी हो, पद्मरागमणिको धारण करके परम शोभाको प्राप्त होती हो, मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। ३४ ।।

पद्मा पद्मासना त्वं हि पद्ममालाविधारिणी ।
प्रणवरूपिणी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। ३५ ।।

हे माता ! तुम कमलासनपर विराजमान रहती हो, अतः तुम्हारा पद्मा ही नाम हुआ, तुम्हारे गलेमें अति मनोहर कमलकी माला पड़ी रहती है, तुम्हीं ओंकारस्वरूपिणी हो । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। ३५ ।।

फुल्लेन्दुवदना त्वं हि फणिवेणीविमोहिनी ।
फणिशायिप्रिया मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। ३६ ।।

हे जननि ! तुम्हारा मुखारविन्द उदय हुए चन्द्रमाके समान निर्मल है, तुम्हारे शिरकी वेणी सर्पके समान अत्यंत शोभायमान है, तुम क्षीरसागरमें फणि शय्यापर शयन करनेवाले देवदेव हरिकी प्रिया हो । मैं नत मस्तक हो तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। ३६ ।।

विश्वकर्त्री विश्वभर्त्री विश्वधात्री विश्वेश्वरी ।
विश्वाराध्या विश्वबाह्या लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ।।३७।।

हे लक्ष्मीदेवि ! तुम्हीं विश्वकी स्रष्टा हो, तुम्हीं विश्वका पालन करनेवाली, तुम्हीं विश्वकी रक्षा करनेवाली और तुम्हीं संपूर्णजीवोंकी ईश्वरी हो । तुम विश्वमें वास करनेवाले जीवोंके द्वारा आराधना करने योग्य हो । तुम विश्वमें सर्व्वत्र व्याप्त रहते हुये भी उसमें लिप्त नहीं हो । तुम विश्वसे परे हो । तुम्हें नमस्कार है ।। ३७ ।।

विष्णुप्रिया विष्णुशक्तिर्बीजमन्त्रस्वरूपिणी ।
वरदा वाक्यसिद्धा च शिरसा प्रणमाम्यहम् ।। ३८ ।।

हे देवि ! तुम विष्णुकी प्रिया और विष्णुकी शक्ति हो, तुम बीजमंत्र स्वरूपिणी, तुम्हीं वर देनेवाली और वाक्यसिद्धि सम्पन्न हो । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ।। ३८ ।।

वेणुवादप्रिया त्वं हि वंशीवाद्यविनोदिनी ।
विद्युद्गौरी महादेवि लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ।। ३९ ।।

हे महादेवि ! हे लक्ष्मी देवि ! तुम बिजलीके समान गौरवर्णवाली, वेणु और वंशी की ध्वनि ही तुम्हें प्रिय है। मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ ।। ३९ ।।

भक्तिमुक्तिप्रदा त्वं हि भक्तानुग्रहकारिणी ।
भवार्णवत्राणकर्त्री लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ।। ४० ।।

हे देवि लक्ष्मी ! तुम्हीं भक्ति और मुक्तिकी देनेवाली हो, तुम्हीं भक्तजनके ऊपर अनुग्रह करनेवाली और तुम्हीं आश्रितजनोंका भवसागरसे उद्धार करती हो। तुझे नमस्कार है ।। ४० ।।

भक्तप्रिया भागीरथी भक्तमंगलदायिनी ।
भयदा भयदात्री च लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ।। ४१ ।।

हे जननी ! तुम भक्तजनके प्रति स्नेह करनेवाली हो, तुम्हीं भागीरथी (गंगा) स्वरूपिणी हो, और भक्तजनका कल्याण करनेवाली हो, तुम्हीं दुष्ट मनुष्योंको भय दिखलाती और शरणागतको अभयदान देती हो । तुम्हें नमस्कार है ।। ४१ ।।

नमोभीष्टप्रदा त्वं हि महामोहविनाशिनी ।
मोक्षदा मानदात्री च लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ।। ४२ ।।

तुम मनोरथ पूर्ण करती और महामोहका विनाश करती हो। तुम्हीं मोक्ष और सन्मानकी देनेवाली हो । तुम्हें नमस्कार है ।। ४२ ।।

महाधन्या महामान्या माधवमनमोहिनी ।
मुखरा प्राणहन्त्री च लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ।। ४३ ।।

हे लक्ष्मीदेवि ! तुम धन्य और माननीय हो । तुमने माधवका मन मोहित किया है, जो स्त्रियाँ बहुत बोलनेवाली हैं तुम उनका संहार करती हो । तुम्हें नमस्कार है ।। ४३ ।।

यौवनपूर्णसौन्दर्य्या योगमाया योगेश्वरी ।
युग्मश्रीफलवक्षाश्च लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ।। ४४ ।।

हे देवि ! तुम पूर्णयौवन संयुक्त होनेके कारण परमकान्तिमय हो, तुम्हीं मूर्त्तिमान् योगमाया और तुम्हीं योगेश्वरी हो, तुम्हारे वक्ष:स्थल श्रीफल के समान पुष्ट और ऊँचे हैं। तुम्हें नमस्कार है ।। ४४ ।।

युग्मांगदविभूषाढया युवतीनां शिरोमणिः ।
यशोदासुतपत्नी च लक्ष्मीदेवि नमोऽस्तुते ।। ४५ ।।

हे देवि ! तुम्हारी दोनों भुजाओंमें आभूषणोंकी विद्यमानता से परम श्रीसम्पादित होती है। तुम्हीं स्त्रियोंके शिरकी मणिस्वरूप हो, तुम यशोदानंदन श्रीकृष्णचंद्र आनन्दकंदकी भार्या हो। तुम्हें नमस्कार है ।। ४५ ।।

रूपयौवनसम्पन्ना रत्नालंकारधारिणी ।
एकेन्दुकोटिसौंदर्य्या लक्ष्मीदेवि नमोऽस्तुते ।। ४६ ।।

हे देवि ! तुम परम रूपवती और यौवन युक्त हो, तुम रत्नालंकारोंसे विभूषित होकर परम शोभा धारण करती हो, तुम्हारी कान्ति कोटि पूर्णचंद्रकी कान्तिसे भी सुन्दर है। तुम्हें नमस्कार है ।। ४६ ।।

रमा रामा रामपत्नी राजराजेश्वरी तथा ।
राज्यदा राज्यहन्त्री च लक्ष्मीदेवि नमोऽस्तुते ।। ४७ ।।

हे देवि ! तुम्हारा ही रमा और रामा नाम है, तुम्हीं रामचन्द्रकी स्त्री जानकी हो, तुम्ही राजराजेश्वरी हो । तुम्हीं प्रसन्न होकर राज्य देती हो और तुम्हीं कुपित होकर राज्य विनाश कर देती हो। तुम्हें नमस्कार है ।। ४७ ।।

लीलालावण्यसम्पन्ना लोकानुग्रहकारिणी ।
ललनाप्रीतिदात्री च लक्ष्मीदेवि नमोऽस्तुते ।। ४८ ।।

हे जननि ! तुम्हीं लोकोंके ऊपर अनुग्रह करती हो । स्त्रियां तुमसे ही परम प्रीति प्राप्त करती हैं । तुम्हें नमस्कार है ।। ४८ ।।

विद्याधरी तथा विद्या वसुदा त्वं हि वन्दिता ।
विन्ध्याचलवासिनी च लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ।। ४९ ।।

हे देवि ! तुम्हीं विद्या, तुम्हीं विद्याधरी, तुम्हीं धन देनेवाली और तुम्हीं केवल वंदन करनेके योग्य हो, तुम्हीं विन्ध्यवासिनीरूपसे विन्ध्याचल पर्वत पर वास करती हो, तुम्हें नमस्कार है ।। ४९ ।।

शुभ्रकांचनगौरांगी शंखकंकणधारिणी ।
शुभदा शीलसम्पन्ना लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ।। ५० ।।

हे देवि ! तुम निर्मल कंचनके समान गौरवर्णवाली हो, तुम्हारे हाथमें शंख और कंगन विराजमान रहता है, तुम्हीं कल्याणकी देनेवाली और श्रेष्ठ चरित्रसे युक्त हो। तुम्हें नमस्कार है।। ५० ।।

षट्चक्रभेदिनी त्वं हि षडैश्वर्यप्रदायिनी ।
षोडशीवयसा त्वं हि लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ॥ ५१ ॥

हे जननि ! तुम्हीं षट्चक्रका भेदन करनेवाली हो, तुम्हीं छ : प्रकारके ऐश्वर्यको देनेवाली हो, तुम सोलह वर्षकी अवस्थावाली स्त्री हो । तुम्हें नमस्कार है ॥ ५१ ॥

सदानन्दमयी त्वं हि सर्व्वसम्पत्तिदायिनी ।
संसारतारिणी देवि शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५२ ॥

हे देवि ! तुम सदा आनंदमयी हो, तुम्हीं संपूर्ण संपत्ति देनेमें समर्थ हो और तुम्हीं इस घोर संसारसे जीवोंको तार सकती हो । मैं नत मस्तक होकर तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ५२ ॥

सुकेशी सुखदा देवि सुन्दरी सुमनोरमा ।
सुरेश्वरी सिद्धिदात्री शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५३ ॥

हे देवि ! तुम्हारे केश मनोहर हैं, तुम्हीं परम सुंदरी और मनमोहिनी हो, तुम देवताओंकी ईश्वरी और सिद्धिकी देनेवाली हो, तुम्हारे अनुग्रहसे ही सुख प्राप्त होता है । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ५३ ॥

सर्व्वसंकटहन्त्रीं च सत्य सत्त्वगुणान्विता ।
सीतापतिप्रिया देवि शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५४ ॥

हे देवि ! तुम संपूर्ण संकट दूर करती हो, तुम सत्यपरायणा और सतोगुणशालिनी हो, तुमनेही सीतापति श्रीरामचन्द्रजीकी राजरानीरूपसे अयोध्यापुरीको पवित्र किया । मैं नत मस्तक होकर तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ५४ ॥

हेमांगी च हास्यमुखी हरिचेतोविमोहिनी ।
हरिपादप्रिया देवि शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥ ५५ ॥

हे देवि! तुम तपे हुए सुवर्णके समान गोरे वर्णवाली हो, तुमनेही हरिका मन मोहित किया है, तुम्हारा चित्त हरिचरणोंमें ही सदा रत रहता है । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ५५ ॥

क्षेमकरी क्षमादात्री क्षौमवासविधारिणी ।
क्षीरमध्या च क्षेत्रांगी लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ॥ ५६ ॥

हे देवि ! तुम कल्याण करनेवाली, सहनशीलता देनेवाली और क्षौम अर्थात् रेशमी वस्त्र धारण करनेवाली हो, तुम्हारी कमर पतली होनेसे अत्यन्त सुशोभित है। तुम्हारे अङ्गोंमें संपूर्ण तीर्थ विराजमान हैं। मैं नत मस्तक हो तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ५६ ॥

श्रीशंकर उवाच

आकारादिक्षकारान्तं लक्ष्मीदेव्या स्तवं शुभम् ।
पठितव्यं प्रयत्नेन त्रिसंध्यञ्च दिनेदिने ॥ ५७ ॥

श्रीमहादेवजी बोले कि हे पार्वती ! तुम्हारे पूछने पर मैंने लक्ष्मी-माहात्म्य और अकारादिसे क्षकारान्तवर्णपर्यन्त लक्ष्मीस्तोत्र वर्णन किया, इस कल्याणके देनेवाले स्तोत्र का प्रतिदिन तीनों काल में पाठ करना चाहिये॥५७॥

पूजनीया प्रयत्नेन कमला करुणामयी ।
वाञ्छाकल्पलता साक्षाद्भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी ॥ ५८ ॥

जो अभिलषित फल देनेमें कल्पलतिका है, जो भक्ति और मुक्ति देती है, उन्हीं करुणामयी लक्ष्मीजीका यत्नसहित पूजन करना चाहिये ॥ ५८ ॥

इदं स्तोत्रं पठेद्यस्तु शृणुयाच्छ्रावयेदपि ।
इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्य सत्यं सत्यं हि पार्व्वति ॥ ५९ ॥

हे पार्वति ! जो मनुष्य इस लक्ष्मीस्तोत्रको पढ़ता अथवा सुनता है या दूसरे मनुष्यको श्रवण कराता है, उसके निःसंदेह संपूर्ण मनोरथ सिद्ध हो जाते हैं ॥ ५९ ॥

इदं स्तोत्रं महापुण्यं यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।
तञ्च दृष्ट्वा भवेन्मूको वादी सत्यं न संशयः ॥ ६० ॥

हे गौरी ! जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इस पवित्र स्तोत्रका पाठ करता है, उसके दर्शनमात्रसे ही गूंगा बोलनेकी शक्तिको प्राप्त करता है, इसमें संदेह नहीं है ॥ ६० ॥

शृणुयाच्छ्रावयेद्यस्तु पठेद्वा पाठयेदपि ।
राजानो वशमायान्ति तं दृष्ट्वा गिरिनंदिनि ॥ ६१ ॥

हे गिरिनन्दिनी पार्वती ! जो मनुष्य इस स्तोत्रको श्रवण करता और दूसरेको सुनाता है, पढ़ता और दूसरेको पढ़ाता है। उसके दर्शनसे ही राजालोग वशमें हो जाते हैं ॥ ६१ ॥

तं दृष्ट्वा दुष्टसंघाश्च पलायन्ते दिशो दश ।
भूतप्रेतग्रहा यक्षा राक्षसाः पन्नगादयः ॥
विद्रवन्ति भयार्त्ता वै स्तोत्रस्यापि च कीर्त्तनात् ॥ ६२ ॥

जो मनुष्य इस लक्ष्मीस्तोत्रका कीर्त्तन करता है उसके देखनेसे ही दुष्ट-गण दशों दिशाओंमें भाग जाते हैं, और भूत, प्रेत, ग्रह, यक्ष, राक्षस, सर्प-इत्यादि सब डरकर भाग जाते हैं। इसमें संदेह नहीं ॥ ६२ ॥

सुराश्च असुराश्चैव गन्धर्वाः किन्नरादयः ।
प्रणमन्ति सदा भक्त्या तं दृष्ट्वा पाठकं मुदा ॥ ६३ ॥

जो मनुष्य इस स्तोत्रको पढ़ता है, उसको देवता, गंधर्व किन्नर सब देखतेही आनन्दित हो भक्तिसहित प्रणाम करते हैं ॥ ६३ ॥

धनार्थी लभते चार्थं पुत्रार्थी च सुतं लभेत् ॥
राज्यार्थी लभते राज्यं स्तवराजस्य कीर्त्तनात् ॥ ६४ ॥

इस अत्युत्तम स्तोत्रका कीर्त्तन करनेसे धनकी इच्छा करनेवाला धन, पुत्रकी इच्छा करनेवाला पुत्र और राज्यकी इच्छा करनेवाला राज्य प्राप्त करता है ॥ ६४ ॥

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्व्वंगनागमः ।
महापापोपपापं च तरन्ति स्तवकीर्त्तनात् ॥ ६५ ॥

मनुष्य ब्रह्महत्या, मद्यपान, चोरी, गुरुस्त्री गमन, महापातक, उप-पातक आदि इस स्तवका कीर्त्तन करनेसे संपूर्णपापोंसे मुक्त हो जाता है ॥६५॥

गद्यपद्यमयी वाणी वदनात्तु प्रजायते ॥
अष्टसिद्धिमवाप्नोति लक्ष्मीस्तोत्रस्य कीर्त्तनात् ॥ ६६ ॥

इस लक्ष्मीस्तोत्रका कीर्त्तन करनेसें अपने आपही मुखसे गद्यपद्यमयी वाणी प्रादुर्भूत हुआ करती है और कीर्त्तनकारी निःसंदेह आठप्रकारकी सिद्धियाँ प्राप्त करता है ॥ ६६ ॥

वन्ध्या चापि लभेत्पुत्रं गर्भिणी प्रसवेत्सुतम् ।
पठनात्स्मरणात्सत्यं वच्मि ते गिरिनन्दिनि ।। ६७ ।।

हे गिरिनन्दिनी ! मैं तुमसे सत्य कहता हूँ कि इस स्तोत्रके पढ़नेसे व श्रवण करनेसे बांझ स्त्री भी पुत्रलाभ करती है और गर्भवती स्त्री को श्रेष्ठ पुत्र प्राप्त होता है ।। ६७ ।।

भूर्ज्जपत्रे समालिख्य रोचनाकुंकुमेन तु ।
भक्त्या संपूजयेद्यस्तु गन्धपुष्पाक्षतैस्तथा ।। ६८ ।।
धारयेद्दक्षिणे बाहौ पुरुषः सिद्धिकांक्षया ।
योषिद्वामभुजे धृत्वा सर्वसौख्यमयी भवेत् ।। ६९ ।।

जो मनुष्य लक्ष्मीकी इच्छा करे, वह भोजपत्र पर रोली और कुंकुमसे इस स्तवको लिख, गंध पुष्पादिसे भक्तिसहित पूजा करके दक्षिणभुजामें और स्त्री बाँई भुजामें धारण कर सुखी होती है ।। ६८ ।। ६९ ।।

विषं निर्व्विषतां याति अग्निर्याति च शीतताम् ।
शत्रवो मित्रतां यान्ति स्तवस्यास्य प्रसादतः ।। ७० ।।

इस स्तवराजके प्रभावसे विषमें निर्विषता अग्निमें शीतलता और शत्रुगणों में मित्रता को प्राप्त होते हैं ।। ७० ।।

बहुना किमिहोक्तेन स्तवस्यास्य प्रसादतः ।
बैकुण्ठे च वसेन्नित्यं वच्मि सुरेश्वरि ।। ७१ ।।

हे पार्वती ! इसका माहात्म्य और अधिक क्या वर्णन करूँ, इसकेही प्रसादसे अंतसमय वैकुण्ठधाम की प्राप्ति होती है । इसमें संदेह नहीं है ।। ७१ ।।

इति श्रीरुद्रयामले शिवगौरीसंवादे पं० कन्हैलालमिश्रकृतहिंदीटीकासहिताकारादिक्षकारान्तवर्णग्रथितं लक्ष्मीस्तोत्रं समाप्तम् ।।

कमलास्तोत्रम्

ओङ्काररूपिणी देवि विशुद्धसत्त्वरूपिणी ।
देवानां जननी त्वं हि प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। १ ।।

हे देवि लक्ष्मी ! तुम ओंकार-स्वरूपिणी हो, तुम्हीं विशुद्धसत्त्व गुण-रूपिणी और तुम्हीं देवताओंकी माता हो । हे सुंदरि ! तुम हमपर प्रसन्न हो ।। १ ।।

तन्मात्रञ्चैव भूतानि तव वक्षस्थलं स्मृतम् ।
त्वमेव वेदगम्या तु प्रसन्ना भव सुंदरि ।। २ ।।

हे सुन्दरि ! पञ्चभूत और पञ्चतन्मात्रा तुम्हारी वक्षस्थल है, केवल वेदद्वारा तुम्हारा तत्त्व जाना जाता है, तुम मुझ पर कृपा करो ।। २ ।।

देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसकिन्नरः ।
स्तूयसे त्वं सदा लक्ष्मि प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। ३ ।।

हे देवि लक्ष्मी ! देव, दानव, गन्धर्व्व, यक्ष, राक्षस और किन्नर सभी सदा तुम्हारी स्तुति करते हैं । तुम हम पर प्रसन्न हो ।। ३ ।।

लोकातीता द्वैतातीता समस्तभूतवेष्टिता ।
विद्वज्जनकीर्त्तिता च प्रसन्ना भव सुंदरि ।। ४ ।।

हे जननि ! तुम लोकसे परे, तुम्हीं द्वैतसे परे और तुम्हीं संपूर्ण भूत-गणोंसे घिरी हुई रहती हो, विद्वान लोग सदा तुम्हारा गुण कीर्त्तन करते हैं । हे सुन्दरी ! तुम मुझ पर प्रसन्न हो ।। ४ ।।

परिपूर्णा सदा लक्ष्मि त्रात्री तु शरणार्थिषु ।
विश्वाद्या विश्वकर्त्री च प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। ५ ।।

हे देवि लक्ष्मी ! तुम नित्यपूर्णा, तुम्हीं शरणागत जनोंका उद्धार करने-वाली हो, विश्वकी आदि और विश्वकी रचना करनेवाली भी केवल तुम्हीं हो । हे सुन्दरि ! तुम हम पर प्रसन्न हो ।। ५ ।।

ब्रह्मरूपा च सावित्री त्वद्दीप्त्या भासते जगत् ।
विश्वरूपा वरेण्या च प्रसन्ना भव सुंदरि ।। ६ ।।

हे जननि । तुम ब्रह्मरूपिणी हो, तुम्हीं सावित्री हो, तुम्हारी दीप्तिसे ही त्रिजगत् प्रकाशित होता है, तुम्हीं विश्वरूपा और वर्णन करनेके योग्य हो, हे सुन्दरी ! तुम मुझ पर कृपा करो ।। ६ ।।

क्षित्यप्तेजोमरुद्व्योमपञ्चभूतस्वरूपिणी ।
बन्धादेः कारणं त्वं हि प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। ७ ।।

हे जननि ! क्षिति, जल, तेज, मरुत् और व्योम, तुम्हीं इन पंचभूतोंकी स्वरूप हो। तुम्हीं गंध, जलका रस, तेजका रूप, वायुका स्पर्श और आकाशमें शब्द तुम्हीं हो, तुम्हीं इन पंचभूतोंके गुण प्रपंचका कारण हो, अर्थात् तुम्हारे प्रभावसेही यह गुणसमूह प्रकाशित होते हैं, हे देवि ! तुम हमपर प्रसन्न हो।।७।।

महेशे त्वं हैमवती कमला केशवेऽपि च।
ब्रह्मणः प्रेयसी त्वं हि प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। ८ ।।

हे देवि ! तुम्हीं शूलपाणि महादेवजीकी प्रियतमा हैमवती, तुम्हीं केशवकी प्रियतमा कमला और ब्रह्माकी प्रेयसी ब्रह्माणीहो। तुम हमपर प्रसन्न हो ।। ८ ।।

चंडी दुर्गा कालिका च कौशिकी सिद्धिरूपिणी ।।
योगिनी योगगम्या च प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। ९ ।।

हे देवि ! तुम चंडी, तुम्हीं दुर्गा, तुम्हीं कालिका, तुम्हीं कौशिकी, तुम्हीं सिद्धिरूपिणी, तुम्हीं योगिनी और केवल योगसेही तुमको प्राप्त किया जाता है। तुम हमपर प्रसन्न हो ।। ९ ।।

बाल्ये च बालिका त्वं हि यौवने युवतीति च।
स्थविरे वृद्धरूपा च प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। १० ।।

हे देवि ! तुम बाल्यकालमें बालिका यौवनकालमें युवती और वार्द्धक्य-कालमें वृद्धारूपसे प्रकाशित होती हो। हें सुन्दरि ! तुम हमारे प्रति प्रसन्न हो ।। १० ।।

गुणमयी गुणातीता आद्या विद्या सनातनी।
महत्तत्त्वादिसंयुक्ता प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। ११ ।।

हे जननि ! तुम गुणमयी, गुणोंसे परे, तुम्हीं आदि, तुम्हीं सनातनी और तुम्हीं महत्तत्त्वादिसंयुक्त हो। हें सुन्दरि ! तुम हम पर प्रसन्न हो ।। ११ ।।

तपस्विनी तपःसिद्धिः स्वर्गसिद्धिस्तदर्थिषु।
चिन्मयी प्रकृतिस्त्वं तु प्रसन्ना भव सुंदरि ।। १२ ।।

हे जननि ! तुम्हीं तपस्वियोंकी तपःसिद्धि स्वर्गार्थिगणोंकी स्वर्गसिद्धि, तुम्हीं आनन्दस्वरूप और तुम्हीं मूलप्रकृति हो, हे सुन्दरि ! तुम हमारे प्रति प्रसन्न हो ।। १२ ।।

त्वमादिर्जगतां देवि त्वमेव स्थितिकारणम् ।
त्वमन्ते निधनस्थानं स्वेच्छाचारा त्वमेवहि ।। १३ ।।

हे देवि ! तुम्हीं जगत्‌की आदि हो, तुम्हीं स्थितिका एकमात्र कारण हो, देहके अंतमें जीवगण तुम्हारे ही निकट चले जाते हैं, तुम्हीं स्वेच्छाचारिणी हो (तुम्हें नमस्कार है) तुम हमारे प्रति प्रसन्न हो ।। १३ ।।

चराचराणां भूतानां बहिरन्तस्त्वमेव हि ।
व्याप्यव्यापकरूपेण त्वं भासि भक्तवत्सले ।। १४ ।।

हे भक्तवत्सले ! तुम चराचर जीवगणोंके बाहर और भीतर दोनों स्थलोंमें विराजमान रहती हो, तुम्हीं व्याप्त और व्यापक रूपसे प्रकाशित होती हो । तुम्हें नमस्कार है ।। १४ ।।

त्वन्मायया हृतज्ञाना नष्टात्मानो विचेतसः ।
गतागतं प्रपद्यन्ते पापपुण्यवशात्सदा ।। १५ ।।

हे जननि ! जीवगण तुम्हारी मायासे ही हतज्ञान और चेतनारहित होकर पुण्यके वशसे बारम्वार इस संसारमें आवागमन करते हैं ।। १५ ।।

तावन्सत्यं जगद्भाति शुक्तिकारजतं यथा ।।
यावन्न ज्ञायते ज्ञानं चेतसा नान्वगामिनी ।। १६ ।।

जैसे सीपीमें अज्ञानतावश चाँदीका भ्रम हो जाता है और फिर उसके स्वरूपका ज्ञान होने पर वह भ्रम दूर हो जाता है, वैसे ही जवतक ज्ञानमय चित्तमें तुम्हारा स्वरूप नहीं जाना जाता है तब तक ही यह जगत् सत्यसा भासित होता है, परन्तु तुम्हारे स्वरूपका ज्ञान हो जानेसे यह सारा संसार मिथ्याभूत ज्ञात होता है ।। १६ ।।

त्वज्ज्ञानात्तु सदा युक्तः पुत्रदारगृहादिषु ।
रमन्ते विषयान्सर्व्वानन्ते दुःखप्रदान् ध्रुवम् ।। १७ ।।

जो मनुष्य तुम्हारे ज्ञानसे अलग रहते हुए जगत्‌को सत्य मानकर विषयोंमें लगे रहते हैं, निःसंदेह अंतमें उनको महादुःख मिलता है ।। १७ ।।

त्वदाज्ञया तु देवेशि गगने सूर्य्यमण्डलम् ।
चन्द्रश्च भ्रमते नित्यं प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। १८ ।।

हे देवेशि ! तुम्हारी आज्ञासे ही सूर्य और चन्द्रमा आकाशमण्डलमें यथानियम भ्रमण करते हैं, तुम हम पर प्रसन्न हो ।। १८ ।।

ब्रह्मेशविष्णुजननी ब्रह्माख्या ब्रह्मसंश्रया ।
व्यक्ताव्यक्त च देवेशि प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। १९ ।।

हे देवेशि ! तुम्हीं ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरकी जननी हो अर्थात् तुमसे ही इनकी उत्पत्ति हुई है । तुम ब्रह्माख्या और ब्रह्मसंश्रया हो, तुम्हीं प्रगट और तुम्हीं गुप्तरूपसे विराजमान रहती हो । हे सुंदरि ! तुम हमपर प्रसन्न हो ।। १९ ।।

अचला सर्व्वगा त्वं हि मायातीता महेश्वरि ।
शिवात्मा शाश्वता नित्या प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। २० ।।

हे देवि ! तुम अचल, तुम्हीं सर्वगामिनी, मायासे परे, तुम्हीं शिवात्मा और नित्य हो । हे सुंदरि ! तुम हमारे प्रति प्रसन्न हो ।। २० ।।

सर्व्वकायनियन्त्री च सर्व्वभूतेश्वरेश्वरी ।
अनन्ता निष्कला त्वं हि प्रसन्ना भवसुन्दरि ।। २१ ।।

हे देवि ! तुम सबके देहकी रक्षा करती हो, तुम्हीं संपूर्णजीवोंकी ईश्वर और ईश्वरी हो, तुम्हीं अनन्त और अखंड हो । तुम हमारे प्रति प्रसन्न हो ।।२१।।

सर्व्वेश्वरी सर्व्ववन्द्या अचिन्त्या परमात्मिका ।।
भुक्तिमुक्तिप्रदा त्वं हि प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। २२ ।।

हे जननि ! तुम सबकी ईश्वरी हो, और सभी भक्ति सहित तुम्हारी वंदना करते हैं, तुम्हीं अचिन्त्या और परमातमस्वरूपिणी हो, तुम्हारे प्रसादसेही भुक्ति और मुक्ति प्राप्त होती है । हे सुन्दरि ! हमारे प्रति प्रसन्न हो ।। २२ ।।

ब्रह्माणी ब्रह्मलोके त्वं वैकुण्ठे सर्व्वमंगला ।
इन्द्राणी अमरावत्यामम्बिका वरुणालये ।। २३ ।।

हे जननि ! तुम्हीं ब्रह्मलोकमें ब्रह्माणी, वैकुण्ठमें सर्वमङ्गला अमरावतीमें इन्द्राणी और वरुणालयमें अम्बिकास्वरूपिणी हो । (तुम्हें नमस्कार है) ।। २३ ।।

यमालये कालरूपा कुबेरभवने शुभा ।
महानन्दाग्निकोणे च प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। २४ ।।

तुम यमके गृहमें कालरूप, कुबेरके भवनमें शुभदायिनी और अग्नि-कोणमें महानन्दस्वरूपिणी हो, हे सुन्दरि ! तुम हमारे प्रति प्रसन्न हो ।। २४ ।।

नैर्ऋत्यां रक्तदन्ता त्वं वायव्यां मृगवाहिनी ।
पाताले वैष्णवीरूपा प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। २५ ।।

तुम नैर्ऋतमें रक्तदन्ता, वायुकोणमें मृगवाहिनी और पातालमें वैष्णवी रूपसे विराजमान रहती हो । हे सुन्दरि ! तुम हमपर प्रसन्न हो ।। २५ ।।

सुरसा त्वं मणिद्वीपे ऐशान्यां शूलधारिणी ।
भद्रकाली च लंकायां प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। २६ ।।

हे देवि ! तुम मणिद्वीपमें सुरसा, ईशानकोणमें शूलधारिणी और लंकापुरीमें भद्रकालीरूपसे स्थित हो । हे सुन्दरि ! तुम हमपर प्रसन्न हो ।। २६ ।।

रामेश्वरी सेतुबन्धे सिंहले देवमोहिनी ।
विमला त्वं च श्रीक्षेत्रे प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। २७ ।।

हे देवि ! तुम सेतुबन्धमें रामेश्वरी, सिंहलद्वीपमें देवमोहिनी और पुरुषोत्तममें विमला नामसे स्थित हो । हे सुन्दरी ! तुम हमपर प्रसन्न हो ।। २७ ।।

कालिका त्वं कालिघट्टे कामाख्या नीलपर्वते ।
विरजा ओड्रदेशे त्वं प्रसन्ना भव सुंदरि ।। २८ ।।

हे देवि लक्ष्मि ! तुम कालीघाटपर कालिका, नीलपर्वतपर कामाख्या और औड्र देशमें विरजारूपसे विराजमान रहती हो । हे सुन्दरि ! तुम हमपर प्रसन्न हो ।। २८ ।।

वाराणस्यामन्नपूर्णा अयोध्यायां महेश्वरी ।
गयासुरी गयाधाम्नि प्रसन्ना भव सुंदरि ।। २९ ।।

हे जननि ! तुम वाराणसीक्षेत्रमें अन्नपूर्णा, अयोध्यानगरीमें महेश्वरी और गयाधाममें गयासुरी रूपमें विराजमान हो । हे सुन्दरि! तुम हमपर प्रसन्न हो ।। २९ ।।

भद्रकाली कुरुक्षेत्रे त्वञ्च कात्यायनी व्रजे ।
माहामाया द्वारकायां प्रसन्ना भव सुन्दरि ।। ३० ।।

हे देवि ! कुरुक्षेत्रमें भद्रकाली, व्रजधाममें कात्यायनी और द्वारका-पुरीमें महामाया रूपमें विराजमान हो । हे सुन्दरि ! तुम हमपर प्रसन्न हो ।।३०।।

क्षुधा त्वं सर्वजीवानां वेला च सागरस्य हि ।
महेश्वरी मथुरायां च प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥ ३१ ॥

हे देवि ! तुम संपूर्ण जीवोंमें क्षुधारूपिणी हो, तुम्हीं मथुरानगरीमें महेश्वरी रूपसे विराजमान रहती हो । हे सुन्दरि ! तुम हमपर प्रसन्न हो ॥ ३१ ॥

रामस्य जानकी त्वञ्च शिवस्य मनमोहिनी ।
दक्षस्य दुहिता चैव प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥ ३२ ॥

हे देवि ! तुम्हीं रामचन्द्रकी जानकी और शिवका मन मोहनेवाली दक्षकी पुत्री हो । हे सुन्दरि ! तुम हमपर प्रसन्न हो ॥ ३२ ॥

विष्णुभक्तिप्रदा त्वं च कंसासुरविनाशिनी ।
रावणनाशिनी चैव प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥ ३३ ॥

हे जननि ! तुम्हीं विष्णुकी भक्ति देनेवाली, तुम्हीं कंसासुर और तुम्हीं रावणका नाश करनेवाली हो । हे सुन्दरि ! तुम हम पर प्रसन्न हो ॥३३॥

लक्ष्मीस्तोत्रमिदं पुण्यं यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।
सर्वज्वरभयं नश्येत्सर्व्वव्याधिनिवारणम् ॥ ३४ ॥

जो मनुष्य भक्तिसहित सर्व व्याधिके नाश करनेवाले इस पवित्र लक्ष्मीस्तोत्रका पाठ करता है, उसे किसी प्रकारके ज्वरका भय नहीं रहता है ॥ ३४ ॥

इदं स्तोत्रं महापुण्यमापदुद्धारकारणम् ।
त्रिसंध्यमेकसन्ध्यं वा यः पठेत्सततं नरः ॥ ३५ ॥
मुच्यते सर्व्वपापेभ्यो तथा तु सर्व्वसंकटात् ।
मुच्यते नात्र सन्देहो भुवि स्वर्गे रसातले ॥ ३६ ॥

यह लक्ष्मीस्तोत्र अत्यन्त पवित्र और विपत्तिके नाश का हेतु है, जो मनुष्य तीनों संध्याओंमें अथवा केवल एकबार ही इसका पाठ करता है, वह संपूर्ण पापोंसे छूट जाता है। स्वर्ग, मर्त्य, पाताल आदिमें कहीं भी उसको किसी प्रकारका संकट नहीं होता इसमें संदेह नहीं है ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

समस्तं च तथा चैकं यः पठेद्भक्तितत्परः ॥
स सर्वदुष्करं तीर्त्वा लभते परमां गतिम् ॥ ३७ ॥

जो मनुष्य भक्तियुक्त चित्तसे यह स्तोत्र संपूर्ण अथवा एक श्लोक भी पढ़ता है, वह संपूर्ण पापोंसे छूटकर निःसंदेह परमगतिको प्राप्त करता है ।।३७।।

सुखदं मोक्षदं स्तोत्रं यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।
स तु कोटीतीर्थफलं प्राप्नोति नात्र संशयः ।। ३८ ।।

जो मनुष्य भक्तियुक्त होकर सुख और मोक्षके देनेवाले इस लक्ष्मी-स्तोत्रका पाठ करता है, उसको करोड़ तीर्थोंका फल प्राप्त होता है, इसमें संशय नहीं है ।। ३८ ।।

एका देवी तु कमला यस्मिंस्तुष्टा भवेत्सदा ।।
तस्याऽसाध्यं तु देवेशि नास्तिकिंचिज्जगत्त्रये ।। ३९ ।।

हे देवेशि ! एक केवल लक्ष्मी ही जिससे संतुष्ट हो, उसको त्रिलोकीमें कुछ भी असाध्य नहीं है ।। ३९ ।।

पठनादपि स्तोत्रस्य किं न सिद्ध्यति भूतले ।
तस्मात्स्तोत्रवरं प्रोक्तं सत्यं सत्यं हि पार्व्वति ।४०।।

हे पार्वती ! मैं सत्य कहता हूं कि पृथ्वीपर ऐसा कोई विषय नहीं है, जो इस स्तोत्रका पाठ करनेसे सिद्ध न किया जाय, अतः यह स्तवराज मैंने कहा ।। ४० ।।

इति श्रीलक्ष्मीस्तोत्र समाप्त ।

लक्ष्मीकवचम्

लक्ष्मी मे चाग्रतः पातु कमला पातु पृष्ठतः ।
नारायणी शीर्षदेशे सर्वांगे श्रीस्वरूपिणी ।। १ ।।

लक्ष्मी हमारे अग्रभागकी, कमला हमारी पीठकी रक्षा करे । नारायणी हमारे मस्तककी और श्रीस्वरूपिणी देवी हमारे संपूर्ण अंगोंकी रक्षा करे ।।१।।

रामपत्नी तु प्रत्यंगे रामेश्वरी सदाऽवतु ।
विशालाक्षी योगमाया कौमारी चक्रिणी तथा ।। २ ।।
जयदात्री धनदात्री पाशाक्षमालिनी शुभा ।
हरिप्रिया हरिरामा जयंकरी महोदरी ।। ३ ।।

कृष्णपरायणा देवी श्रीकृष्णमनमोहिनी ।
जयंकरी महारौद्री सिद्धिदात्री शुभंकरी ।। ४ ।।
सुखदा मोक्षदा देवी चित्रकूटनिवासिनी ।
भयं हरतु भक्तानां भवबन्धं विमुञ्चतु ।। ५ ।।

जो रामपत्नी और रामेश्वरी हैं, वही विशालाक्षी योग माया हमारे सब अंग उपांगोंकी रक्षा करे । वह कौमारी है, चक्रधारिणी है, जयकी देनेवाली है और पाशाक्षमालिनी है । वह कल्याणी है, हरिप्रिया है, हरिरामा है, जयंकरी है, महादेवी है, कृष्णपरायणा हैं, श्रीकृष्णका मन मोहन करनेवाली है, जो महाभयंकर है, जो सिद्धि देनेवाली है, जो शुभंकरी है, वह सुख तथा मोक्षकी देनेवाली है, और जिसके चित्रकूट निवासिनी इत्यादिक नाम हैं, वही अनपायिनी (अपायरहित) लक्ष्मी देवी हम भक्तोंके भय दूर करके सदा रक्षा करे और हमारे संसारीबंधनका छेदन करे ।। २-५।।

कवचं तन्महापुण्यं यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।
त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा मुच्यते सर्वसंकटात् ।। ६ ।।

जो मनुष्य भक्तियुक्त होकर प्रतिदिन तीनवार अथवा केवल एक वार ही इस परम पवित्र लक्ष्मीकवचका पाठ करता है, वह संपूर्ण संकटोंसे मुक्त हो जाता है ।। ६ ।।

कवचस्यास्य पठनं धनपुत्रविवर्द्धनम् ।
भीतिर्विनाशनं चैव त्रिषु लोकेषु कीर्तितम् ।। ७ ।।

इस कवचके पाठ करनेसे पुत्र और धनादिकी वृद्धि होती है और भयसमूह दूर हो जाते हैं । इसका माहात्म्य त्रिभुवनमें विख्यात है ।। ७ ।।

भूर्जपत्रे समालिख्य रोचनाकुंकुमेन तु ।।
धारणाद्गलदेशे च सर्व्वसिद्धिर्भविष्यति ।। ८ ।।

भोजपत्रपर रोचन और कुंकुमसे इसको लिखकर कण्ठमें धारण करनसे संपूर्ण कामना सिद्ध हो जाती है ।। ८ ।।

अपुत्रो लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनम् ।
मोक्षार्थी मोक्षमाप्नोति कवचस्यास्य प्रसादतः ।। ९ ।।

इस कवचके प्रसादसे अपुत्र मनुष्यको पुत्र प्राप्त होता है, धनकी इच्छा करनेवालेको धन और मोक्षकी इच्छा करनेवालेको निःसंदेह मोक्षकी प्राप्ति होती है ।। ९ ।।

गर्भिणी लभते पुत्रं वंध्या च गर्भिणी भवेत् ।
धारयेद्यदि कण्ठे च अथवा वामबाहुके ।। १० ।।

यदि स्त्रियाँ कण्ठ अथवा बांई भुजामें इस कवचको नियमसे धारण करें, तो गर्भवती स्त्रीको उत्तम पुत्र प्राप्त होता है और वांझ स्त्री भी गर्भवती होती है ।। १० ।।

यः पठेन्नियतो भक्त्या स एव विष्णुवद्भवेत् ।
मृत्युव्याधिभयं तस्य नास्ति किञ्चिन्महीतले ।। ११ ।।

जो मनुष्य नियमित और भक्तिसहित इस कवचका पाठ करता है वह विष्णुकी समानताको प्राप्त होता है । संसार में उसे मृत्यु अथवा व्याधिका भय नहीं रहता ।। ११ ।।

पठेद्वा पाठयेद्वापि शृणुयाच्छ्रावयेदपि ।
सर्वपापविमुक्तस्स लभते परमां गतिम् ।। १२ ।।

जो मनुष्य इस कवचका पाठ करता या अध्ययन कराता है, स्वयं सुनता अथवा दूसरेको सुनाता है, वह संपूर्ण पापोंसे छूटकर परमगतिको प्राप्त करता है ।। १२ ।।

संकटे विपदे घोरे तथा च गहने वने ।
राजद्वारे च नौकायां तथा च रणमध्यतः ।।
पठनाद्धारणादस्य जयमाप्नोति निश्चितम् ।। १३ ।।

संकट, घोर विपद, गहनवन, राजद्वार, नावका मार्ग, रण आदि स्थानों में इस कवचका पाठ करनेसे अथवा धारण करनेसे जयकी प्राप्ति होती है ।। १३ ।।

अपुत्रा च तथा वन्ध्या त्रिपक्षं शृणुयाद्यदि ।
सुपुत्रं लभते सा तु दीर्घायुष्कं यशस्विनम् ।। १४ ।।

वांझ स्त्री अथवा जिसके पुत्र हुआ नहीं है वह यदि तीन पक्ष पर्यन्त इस कवचको श्रवण करे तो दीर्घायु, महायशवान् सुपुत्र लाभकर सकती है, इसमें संदेह नहीं है ।। १४ ।।

शृणुयाद्यः शुद्धबुद्धया द्वौ मासौ विप्रवक्त्रतः ।
सर्वान्कामानवाप्नोति सर्वबन्धाद्विमुच्यते ।। १५ ।।

जो मनुष्य विशुद्धमन से दो महीनेतक ब्राह्मणके मुखसे इस कवचको श्रवण करता है, उसकी संपूर्ण कामना सिद्ध होती हैं, और वह सर्व प्रकारके संसारबंवनोंसे छूट जाता है ।। १५ ।।

मृतवत्सा जीववत्सा त्रिमासं श्रवणं यदि ।
रोगी रोगाद्विमुच्येत पठनान्मासमध्यतः ।। १६ ।।

जिस स्त्रीके पुत्र उत्पन्न होकर जीते नहीं वह तीन महीने तक इस कवच को भक्तिसहित धारण करे तो जीववत्सा हो अर्थात उसके पुत्र जीने लगेंगे । रोगी मनुष्य भी पाठ करनेसे एक मासके मध्यही रोगसे मुक्ति पा जाता है ।। १६ ।।

लिखित्वा भूर्जपत्रे च अथवा ताडपत्रके ।
स्थापयेन्नियतं गेहे नाग्निचौरभयं क्वचित् ।। १७ ।।

जो मनुष्य भोजपत्र अथवा ताड़के पत्तोंपर इस कवचको लिखकर गृहमें स्थापित करता है उसे अग्नि या चोर इत्यादिका भय नहीं होता ।।१७ ।।

शृणुयाद्धारयेद्वापि पठेद्वा पाठयेदपि ।
यःपुमान्सततं तस्मिन्प्रसन्नाः सर्वदेवताः ।। १८ ।।

जो मनुष्य प्रतिदिन इस कवचको श्रवण करता है, पाठ करता है, दूसरेको अध्ययन कराता है और जो मनुष्य इसको धारण करता है, उसपर देवगण सदा संतुष्ट रहते हें ।। १८ ।।

बहुना किमिहोक्तेन सर्व्वजीवेश्वरेश्वरी ।
आद्याशक्तिः सदालक्ष्मीर्भक्तानुग्रहकारिणी ।।
धारके पाठके चैव निश्चला निवसेद् ध्रुवम् ।। १९ ।।

अधिक कहातक कहूं, जो मनुष्य इस कवचका पाठ करता है, या धारण करता है, संपूर्ण जीवोंकी ईश्वरी, भक्तोंपर अनुग्रह करनेवाली आद्याशक्ति लक्ष्मीदेवी निश्चल उस मनुष्यमें वास करती है, इसमें संदेह नहीं ॥ १९ ॥

इति तन्त्रोक्तं लक्ष्मीकवचं समाप्तम्

कमलाप्रीतिसाधनम्

मानसे सारसे रम्ये नानामुनिसमावृते।
प्रजापतिं समासीनं नारदो वाक्यमब्रवीत् ॥ १ ॥

एक समय अनेक ऋषियोंके सहित मानससरोवरके रमणीक आश्रममें प्रजापति ब्रह्माजी सुखपूर्वक विराजमान थे। इसी अवसरपर नारदने कथामें प्रसंगवशात् पूछा ॥१॥

नारद उवाच

भोभो देव महाभाग सर्व्वलोकपितामह।
कमलासाधनं पुण्यं वक्तुमर्हसि तत्त्वतः ॥ २ ॥

नारजी बोले–कि हे देव ! हे महाभाग ! तुम सर्वलोकोंके पितामह हो, मैं पवित्र कमलासाधनके श्रवण करनेकी अभिलाषा करता हूं, अर्थात् किस प्रकारके कार्य करनेसे मनुष्य देवीको प्रसन्न कर सकता है, उसे विस्तारपूर्वक वर्णन करो ॥ २ ॥

केनोपायेन भो देव नरो दुःखहरो भवेत्।
केनोपायेन भो ब्रह्मन् चञ्चला अचलागृहे ॥ ३ ॥

हे देव ! हे ब्रह्मन् ! किस उपायसे मनुष्य दुःखसे छुटकारा पा सकता है ? और किस उपायसे चपला लक्ष्मी अचल होकर गृहमें बास करती है ॥।३॥

ब्रह्मोवाच

साधु पृष्टं महाभाग मुनिपुंगव नारद।
परितुष्टोऽस्मि ते वत्स वक्ष्यामि यत्तवेप्सितम् ॥ ४ ॥

ब्रह्माजी बोले कि हे ऋषिसत्तम नारद हे वत्स ! तुमने अत्युत्तम विषय पूछा है, तुम्हारा प्रश्न सुनकर मैं अत्यन्त संतुष्ट हुआ हूं । तुम जिसके श्रवण करनेकी अभिलाषा करते हो, मैं उसका वर्णन करता हूं श्रवण करो ।। ४ ।।

पुत्र जन्मनि योगे च रविसंक्रमणे तथा ।
चन्द्रसूर्य्यग्रहे चैव यः स्नाति स च लक्ष्मीभाक् ।। ५ ।।

पुत्र जन्मके समय, योगके समय, जिस समय सूर्य संक्रातिमें हो और चन्द्र सूयंके ग्रहणके समय जो मनुष्य स्नान करता है, वह लक्ष्मीयुक्त होता है । ।।५।।

नित्यमुषसि संध्यायां तथा च भास्करोदये ।
अशुचिस्पर्शने चैव यः स्नाति स च लक्ष्मीभाक् ।। ६ ।।

जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल, संध्यासमय और सूर्योदयके समय स्नान करता है, और अपवित्र वस्तुस्पर्श करते ही जो उसी समय जलमें गोता लगाकर स्नान करता है वह लक्ष्मीयुक्त होता है ।। ६ ।।

माघे मासि हविष्याशी तथा संयतमानसः ।
मौनीभूत्वाउषःकाले यःस्नाति स च लक्ष्मीभाक् ।। ७ ।।

जो मनुष्य मन जीतकर और मौन हो हविष्यान्नभोजन करके माघके महीनेमें प्रतिदिन स्नान करता है, वह लक्ष्मीयुक्त होता है ।। ७ ।।

गयायाञ्च कुरुक्षेत्रे तथा वाराणसीपुरे ।
सागरसंगमे चैव यः स्नाति स च लक्ष्मीभाक् ।। ८ ।।

जो पुरुष गयामें, कुरुक्षेत्रमें, वाराणसी (बनारस) तथा गंगा—सागरके संगममें स्नान करता है, वह लक्ष्मीयुक्त होता है, इसमें संदेह नहीं ।।८।।

एकादश्यामामलकीं विष्णवे यः प्रयच्छति ।
आमलकीजले चैव यः स्नाति स च लक्ष्मीभाक् ।। ९ ।।

जो मनुष्य एकादशी तिथिको विष्णुको आमला प्रदान करता है अथवा आमलेके जलमें स्नान करता है वह मनुष्य लक्ष्मीयुक्त होता है ।। ९ ।।

अमावस्यां तथा षष्ठ्यां नवम्यां प्रतिपद्यपि ।
वर्जयेद्दन्तकाष्ठंतद्यदि श्रीमभिकांक्षति ।। १० ।।

जो मनुष्य लक्ष्मीकी कामना करे, वह अमावस्या, छठ और प्रतिपदा को दन्तधावन न करे ।। १० ।।

ज्येष्ठे मासि शुक्लपक्षे तथा च दशमीतिथौ ।
गंगातोये च हस्तर्क्षे यः स्नाति स च लक्ष्मीभाक् ।। ११ ।।

जो मनुष्य ज्येष्ठमासके शुक्लपक्षमें दशमी तिथिको हस्तनक्षत्र में गंगाजीके जलमें स्नान करता है, वह मनुष्य लक्ष्मीयुक्त होता है ।। ११ ।।

विरुद्धाचरणं हिंसां परदारोपसेवनम् ।
पारुष्यानृतपैशुन्यमसम्बद्धाभिभाषणम् ।। १२ ।।
परद्रव्याभिध्यानञ्च मनसानिष्टचिन्तनम् ।
एतत्सर्व्वं वर्जयेद्यः स भवेत्कमलाप्रियः ।। १३ ।।

विरुद्ध आचरण, हिंसा, पराई स्त्रीका सेवन, कठोर वचन, अनृत, पैशुन्य, असंबद्ध वार्ता, पराये धनकी अभिलाषा, मनमें अनिष्टकी चिन्ता आदि का जो मनुष्य परित्याग करता है, वह निःसंदेह लक्ष्मीका प्रियपात्र होता है ।। १२ ।। १३ ।।

ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय धर्म्मार्थौ चानुचिन्तयेत् ।
प्रातःसन्ध्यामुपासीत दन्तधावनपूर्व्विकाम् ।। १४ ।।
उभे मूत्रपुरीषे च दिवा कुर्य्यादुदङ्मुखः ।
रात्रौ च दक्षिणे कुर्य्यादुभे सन्ध्ये यथा दिवा ।
छायायामन्धकारे यो लक्ष्मीं समभिकांक्षति ।। १५ ।।

जो मनुष्य लक्ष्मीके प्राप्त होनेकी इच्छा करे, वह ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर धर्म और अर्थकी चिन्ता करे, दातून करके प्रातःकालकी संध्या करे, दिनमें उत्तरको मुख करके और रात्रिमें दक्षिणको मुख करके मूत्र व पुरीष (मल) त्याग करे । दोनों सन्ध्याओंमें भी दिनके समान करे, दिनमें अथवा रात्रिको छाया और अंधकारमें मूत्र और पुरीष त्याग करे ।। १४–१५ ।।

गोमयांगारवल्मीकहलाकृष्टे जले शुचौ ।
मार्गमध्ये न त्यजेयुर्मूत्रञ्चापि पुरीषकम् ।। १६ ।।

लक्ष्मी प्राप्त करनेकी इच्छा हो तो गोबर, कोयला, बमई, हलाकृष्ट (ज्योति हुई भूमि) में, पवित्र जल में और मार्ग में मल-मूत्र त्याग न करे।।१६।।

अन्तर्जलाद्देवगृहाद्वल्मीकान्मूषिकस्थलात् ।
परेषां शौचशिष्टाञ्चश्मशानानां मृदं त्यजेत् ।। १७ ।।

शौचसमयमें जलके भीतरकी, देवालयकी, बमईकी, चूहेके भट्टेकी और श्मशानकी मिट्टी न ग्रहण करे और दूसरे मनुष्यके शौच के उपरान्त त्यागी हुई मिट्टी भी न ग्रहण करे ।। १७ ।।

एकां लिंगे मृदं दद्याद्वामहस्ते मृद्द्वयम् ।
उभयोर्द्वे च दातव्ये यदि श्रीमभिकांक्षति ।। १८ ।।

यदि लक्ष्मी प्राप्तिकी अभिलाषा हो तो मूत्र त्याग करके एक बार लिंग, दोबार दांया हाथ और दोनों हाथोंको दोबार मिट्टी द्वारा साफ करे ।।१८।।

विनाकारणमन्विष्य न स्नायाच्च पुनः पुनः ।
नोद्वर्त्तनस्नानांते च यदि श्रीर्मभिकांक्षति ।। १९ ।।

जो मनुष्य लक्ष्मीकी कामना करे, वह कभी बिना कारण बारंबार स्नान नहीं करे और स्नान करनेके उपरान्त तैलादिक लगाना भी उचित नहीं है ।। १९ ।।

सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न कुर्यान्मर्म्मपीडकम् ।
पैशुन्यञ्च त्यजेत्सोऽपि यदि श्रीमभिकांक्षति ।। २० ।।

वह सत्य और प्रिय वचन न बोले जिससे लोकको मर्म पीड़ा प्राप्त हो और सर्वथा पैशुन्य अर्थात् धूर्त्तता त्याग करे, ऐसा आचरण करनेसे ही लक्ष्मी प्राप्त होती है ।। २० ।।

लक्ष्मीस्तोत्रम्

ईश्वर उवाच

त्रैलोक्यपूजिते देवि कमले विष्णुवल्लभे ।
यथा त्वं सुस्थिराकृष्णे तथा भव मयि स्थिरा ।।१ ।।

ईश्वर बोले कि हे देवि ! लक्ष्मी तुम्हीं त्रैलोक्यकी पूजनीय हो । हे विष्णु-वल्लभे ! तुम श्रीकृष्णमें जिस प्रकार स्थिर होकर रहती हो इसी प्रकार हममें अचल होकर रहो ।। १ ।।

ईश्वरी कमला लक्ष्मीश्चला भूतिर्हरिप्रिया ।
पद्मा पद्मालया सम्पदुच्चैः श्रीः पद्मधारिणी ।। २ ।।

हे देवि ! तुम्हीं ईश्वरी, कमला, लक्ष्मी, चलभूति (चल ऐश्वर्य) धारिणी इत्यादि नामोंसे युक्त हो ।। २ ।।

द्वादशैतानि नामानि लक्ष्मीं संपूज्य यःपठेत् ।
स्थिरा लक्ष्मीर्भवेत्तस्य पुत्रदारादिभिः सह ।। ३ ।।

जो मनुष्य लक्ष्मीजीकी पूजा करके इन द्वादश (बारह) नामोंका पाठ करता है, लक्ष्मी देवी उसके यहां अचल रहती है और उसके पुत्र पौत्रादि उत्तरोत्तर वृद्धि प्राप्त करते हैं ।।३ ।।

इति विश्वसारतन्त्रोक्तं लक्ष्मीस्तोत्रं समाप्तम् ।

लक्ष्मीकवच प्रारंभः

ईश्वर उवाच

अथ वक्ष्ये महेशानि कवचं सर्वकामदम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण भवेत्साक्षात्सदाशिवः ।। १ ।।

ईश्वर बोले कि हे महेशानि ! अब सर्व वस्तुप्रद लक्ष्मीकवच वर्णन करता हूं, जिसके जाननेसे उसी समय शिवसायुज्य (साक्षात् सदाशिव) की प्राप्ति होती है ।। १ ।।

नार्चनं तस्य देवेशि मन्त्रमात्रं जपेन्नरः ।
स भवेत्पार्व्वतीपुत्रः सर्वशास्त्रेषु पारगः ।। २ ।।

हे देवेशि ! उसे पूजा नहीं करनी होती, वह केवल मंत्रका ही जप करके पार्वतीपुत्रके समान हो सकता है और सर्वशास्त्रमें पारदर्शी हो जाता है ।। २ ।।

विद्यार्थिना सदा सेव्या विशेषे विष्णुवल्लभा ।। ३ ।।

जो मनुष्य विद्या की अभिलाषा करे वह यत्नपूर्वक विष्णुप्रिया लक्ष्मीकी आराधना करे ।। ३ ।।

अस्याश्चतुरक्षरिविष्णुवनितारूपायाः कवचस्य श्री भगवान् शिव ऋषिरनुष्टुप्च्छन्दोवाग्भवी देवता वागभवं बीजं लज्जाशक्ती रमा कीलकं कामबीजात्मकं कवचं मम सुपाण्डित्यकवित्वसर्व्वसिद्धिसमृद्धये जपे विनियोगः ।। ४ ।।

इस चतुरक्षरी विष्णुवनिता (लक्ष्मीके) कवचमें ऋषि श्रीभगवान् शिव, अनुष्टुप्, छन्द, देवता वाग्भवी, ऐं बीज लज्जा शक्ति, रमा कीलक है । यह कवच कामबीजात्मक, सुपाण्डित्य, कवित्व और सर्वसिद्धिसमृद्धिके निमित्त विनियोग करना कहा है ।। ४ ।।

ऐङ्कारी मस्तके पातु वाग्भवी सर्व्वसिद्धिदा ।
ह्रीं पातु चक्षुषोर्मध्ये चक्षुर्युग्मे च शांकरी ।। ५ ।।

ऐंकारी हमारे मस्तककी रक्षा करे, संपूर्ण सिद्धिको देनेवाली वाग्भवी ही हमारे दोनों नेत्रोके मध्यकी और शांकरी हमारे दोनों नेत्रोंकी रक्षा करे।।५।।

जिह्वायां मुखवृत्ते च कर्णयोर्गण्डयोर्नसि ।
ओष्ठाधरे दन्तपंक्तौ तालुमूले हनौ पुनः ।।
पातु मां विष्णुवनिता लक्ष्मीः श्रीवर्णरूपिणी ।। ६ ।।

वर्णरूपिणी विष्णुवनिता लक्ष्मी हमारी जिह्वा, मुखमंडल, दोनों कर्ण, दोनों नासिका, ओष्ठ, अधर, दन्तपंक्ति, तालुमूल (तालुआ) और ठोडीकी रक्षा करे ।।६।।

कर्णयुग्मे भुजद्वन्द्वे स्तनद्वन्द्वे च पार्व्वती
हृदये मणिबन्धे च ग्रीवायां पार्श्वयोः पुनः ।
सर्व्वाङ्गे पातु कामेशी महादेवी समुन्नतिः ।। ७ ।।

पार्वतीनामक लक्ष्मी हमारे दोनों कानोंकी, दोनों भुजा, दोनों स्तन, हृदय, मणिबन्ध, गरदन और पार्श्वकी रक्षा करे। कामेशी महादेवी और समुन्नति हमारे संपूर्ण अंगोंकी रक्षाविधान करे ।। ७ ।।

व्युष्टिः पातु महामाया उत्कृष्टि सर्व्वदावतु ।
सन्धि पातु सदा देवी सर्व्वत्र शम्भुवल्लभा ।। ८ ।।

व्युष्टि, महामाया और उत्कृष्टि सदा हमारी रक्षा करें, देवी शंभु वल्लभा सर्वत्र सदा हमारे सन्धि (मिलाप) के रक्षा विधानमें तत्पर रहें ॥८॥

वाग्भवी सर्व्वदा पातु पातु मां हरिगेहिनी ।
रमा पातु सदा देवी पातु माया स्वराट् स्वयम् ॥ ९ ॥

बाग्देवी सदा हमारी रक्षा करे, हरिगेहिनी निरंतर हमारी रक्षा करे और रमा व माया सदा हमारी रक्षा में नियुक्त रहे ॥ ९ ॥

सर्वांगे पातु मां लक्ष्मीर्विष्णुमाया सुरेश्वरी ।
विजया पातु भवने जया पातु सदा मम ॥ १० ॥

विष्णुमाया सुरेश्वरी लक्ष्मीजी हमारे संपूर्ण अंगोंकी रक्षा करे, विजया हमारे घरमें सदा रक्षाविधानमें नियुक्त रहे और जया हमारी रक्षा करे ॥ १० ॥

शिवदूती सदा पातु सुंदरी पातु सर्व्वदा ।
भैरवी पातु सर्व्वत्र भैरुण्डा सर्व्वदाऽवतु ॥ ११ ॥

शिवदूती, सुन्दरी, भैरवी और भैरुण्डा सर्व स्थानमें सदा हमारी रक्षा करें ॥ ११ ॥

त्वरिता पातु मां नित्यमुग्रतारा सदाऽवतु ॥
पातु मां कालिका नित्यं कालरात्रिः सदाऽवतु ॥ १२ ॥

त्वरिता, उग्रतारा, कालिका और कालरात्रि प्रतिदिन सदा हमारी रक्षा करें ॥ १२ ॥

नवदुर्गा सदा पातु कामाख्या सर्व्वदावतु ।
योगिन्यः सर्व्वदा पांतु मुद्राः पांतु सदा मम ॥ १३ ॥

नवदुर्गा, कामाख्या, और योगिनीगण व मुद्रासमूह सदा हमारी रक्षा करती रहें ॥ १३ ॥

मातरः पांतु देव्यश्च चक्रस्था योगिनीगणाः ।
सर्व्वत्र सर्वकार्येषु सर्व्वकर्म्मसु सर्व्वदा ॥
पातुमां देवदेवी च लक्ष्मीः सर्व्वसमृद्धिदा ॥ १४ ॥

मातृदेवीगण, चक्रकी योगिनीगण और संपूर्ण समृद्धि देनेवाली देवदेवी लक्ष्मी सदा हमारी रक्षा करें ॥ १४ ॥

इति ते कथितं दिव्यं कवचं सर्वसिद्धये ।
यत्र तत्र न वक्तव्यं यदीच्छेदात्मनो हितम् ।। १५ ।।

मैंने तुम्हें सर्वसिद्धियों का देनेवाला इस अत्युत्तम दिव्यलक्ष्मीकवचको सुनाया जो इससे लाभ उठाना चाहते हैं उन्हें जहां-तहां इसका वर्णन नहीं करना चाहिये ।। १५ ।।

शठाय भक्तिहीनाय निन्दकाय महेश्वरि ।
न्यूनांगे अतिरिक्तांगे दर्शयेन्न कदाचन ।। १६ ।।

हे महेश्वरि ! जो मनुष्य शठ भक्तिविहीन तथा निन्दक हैं और जो मनुष्य स्थूल अंगवाला अथवा जो मनुष्य किसी अंगसे हीन हो उसके निकट प्राणान्त का अवसर आने पर भी यह कवच प्रकाशित न करे ।। १६ ।।

न स्तवं दर्शयेद्दिव्यं संदर्श्य शिवहा भवेत् ।। १७ ।।

दुरात्मा मनुष्योंके निकट कभी इस स्त्रोत्र को प्रकट न करे, जो मनुष्य प्रकट करता है वह शिवहत्याके पापसे लिप्त हो जाता है ।। १७ ।।

कुलीनाय महोच्छ्राय दुर्गाभक्तिपराय च
वैष्णवाय विशुद्धाय दद्यात्कवचमुत्तमम् ।। १८ ।।

जो मनुष्य कुलीन उन्नतिमान् दुर्गाकी भक्ति करनेवाला विष्णुभक्त है और विशुद्धचित्त है, उसको ही यह अत्युत्तम दिव्यकवच प्रदान करे ।।१८।।

निज शिष्याय शान्ताय धनिने ज्ञानिने तथा ।
दद्यात्कवचमित्युक्तं सर्व्वतन्त्रसमन्वितम् ।। १९ ।।

शान्तशील अपने शिष्यको यह सर्वतंत्रमय कवच प्रदान करे । और जो मनुष्य भक्ति के धनसे धनवान् और ज्ञानी हों उसे प्रदान कर सकते हैं । अन्य किसीको प्रदान न करें ।। १९ ।।

विलिख्य कवचं दिव्यं स्वयम्भुकुसुमैः शुभैः ।
स्वशुक्रैः परशुक्रैश्च नानागन्धसमन्वितैः ।। २० ।।
गोरोचनाकुंकुमेन रक्तचन्दनकेन वा ।
सुतिथौ शुभयोगे वा श्रवणायां रवेर्दिने ।। २१ ।।

अश्विन्यांकृत्तिकायांवाफल्गुन्यांवामघासु च ।
पूर्व्वंभाद्रपदायोगे स्वात्यां मंगलवासरे ।। २२ ।।
विलिखेत्प्रपटेत्स्तोत्रं शुभयोगे सुरालये ।
आयुष्मत्प्रीतियोगे च ब्रह्मयोगे विशेषतः ।। २३ ।।
इन्द्रयोगे शुभेयोगे शुक्रयोगे तथैव च ।
कौलवे बालवे चैव वणिजे चैव सत्तमः ।। २४ ।।

शुभतिथिको शुभयोगमें, श्रवणनक्षत्रमें, रविवारको अश्विनीनक्षत्रमें, कृत्तिकानक्षत्रमें, फाल्गुनीनक्षत्रमें, मघानक्षत्रमें पूर्वभाद्रपदनक्षत्रमें, स्वातीनक्षत्रमें, मंगलवारको, विशेषकरके ब्रह्मयोगमें, इन्द्रयोगमें शुभयोगमें, शुक्र योगमें, कौलव बालव और वाणिजकरणयोगमें स्वयम्भू, कुसुम, गोरोचन, कुंकुम, लालचंदन अथवा अत्युत्तम गन्धद्रव्यसे इस दिव्य कवचको लिखकर इसकी पूजा करनेसे दीर्घायु और श्रीकी वृद्धि होती है। ।।२०-२४ ।।

शून्यागारे श्मशाने वा विजने च विशेषतः ।
कुमारीं पूजयित्वादौ यजेद्देवीं सनातनीम् ।। २५ ।।

सूने घरमें, श्मशान अथवा निर्जनस्थानमें कुमारीकी पूजा करके फिर सनातनी देवी लक्ष्मीकी पूंजा करे ।। २५ ।।

मत्स्यमांसै शाकसूपैः पूजयेत्परदेवताम् ।
घृताद्यैः सोपकरणैः पूपसूपैर्व्विशेषतः ।। २६ ।।
ब्राह्मणान्भोजयित्वादौ प्रीणयेत्परमेश्वरीम् ।। २७ ।।

मत्स्य, मांस, सूप (दाल), शाक, पिट्ठी, घृत, आदि अनेक प्रकारके द्रव्योंसे लक्ष्मीकी आराधना करे । प्रथम ब्राह्मणोंको भली भाँतिसे भोजन कराकर फिर देवीकी प्रसन्नता के लिए साधना करना उचित है ।। २६ ।। २७।।

बहुना किमिहोक्तेन कृते त्वेवं दिनत्रयम् ।
तदाधरेन्महारक्षां शङ्करेणाभिभाषितम् ।। २८ ।।

अधिक और क्या वर्णन करूं ? जो मनुष्य तीन दिन इस प्रकार लक्ष्मीदेवीकी आराधना करता है वह किसी प्रकारकी विपत्तिमें नहीं पड़ता है । वह

संपूर्ण आपदाओंसे रक्षित रहता है, शंकर द्वारा कथित यह वाक्य कभी विफल होने वाला नहीं है ।। २८ ।।

मारणद्वेषणादीनि लभते नात्र संशयः ।
स भवेत्पार्व्वतीपुत्रः सर्व्वशास्त्रविशारदः ।। २९ ।।

जो मनुष्य भक्ति सहित लक्ष्मी देवीकी पूजा करके इस दिव्य कवचका पाठ करता है, उसे मारणद्वेषादि मंत्रों की सिद्धि होती है और वह पार्वतीका प्रिय पुत्र और सर्व्वशास्त्र विशारद होता है ।। २९ ।।

गुरुर्देवो हरः साक्षात्पत्नी तस्य हरप्रिया ।
अभेदेन भजेद्यस्तु तस्य सिद्धिरदूरतः ।। ३० ।।

जो मनुष्य एकान्तचित्त हो लक्ष्मी देवीकी आराधना करता है वह साक्षात् देवदेव शिवाजीकी सायुज्यमुक्तिको प्राप्त करता है, उसकी स्त्री हर-प्रियाके समान होती है और यह कहना भी अत्युक्ति नहीं होगा कि, उस पुरुष को सिद्धि शीघ्र ही प्राप्त हो जाती है ।। ३० ।।।

सर्वदेवमयीं देवीं सर्वमन्त्रमयीं तथा ।
सुभक्त्या पूजयेद्यस्तु स भवेत्कमलाप्रियः ।। ३१ ।।

जो मनुष्य भक्तिसहित सर्व्वदेवमयी और सर्वमन्त्रमयी लक्ष्मीदेवीका पूजन करता है, वह निःसंदेह कमलाका प्रियपात्र हो जाता है ।। ३१ ।।

रक्तपुष्पैस्तथा गन्धैर्वस्त्रालंकरणैस्तथा ।
भक्त्या यः पूजयेद्देवीं लभते परमां गतिम् ।। ३२ ।।

जो मनुष्य लालफूल, लालचन्दन, वस्त्र और अलंकारादिसे भक्ति-सहित लक्ष्मीदेवीका पूजन करता है वह अन्तकालमें परमगतिको प्राप्त करता है ।।३२।।

नारी वा पुरुषो वापि यः पठेत्कवचं शुभम् ।
मन्त्रसिद्धिः कार्यसिद्धिर्लभते नात्र संशयः ।। ३३ ।।

स्त्री पुरुष सभी जो इस कल्याणके देनेवाले कवच का पाठ करते हैं वह निःसंदेह मन्त्र सिद्धि और कार्य-सिद्धि प्राप्त करते हैं ।। ३३ ।।

पठति य इह मर्त्यो नित्यमार्द्रान्तरात्मा
जपफलमनुमेयं लप्स्यते यद्विधेयम् ।।
स भवति पदमुच्चैः सम्पदां पादनम्रः ।
क्षितिपमुकुटलक्ष्मीर्लक्षणानां चिराय ।। ३४ ।।

जो मनुष्य भक्तिपरायणचित्तसे प्रतिदिन इस लक्ष्मीकवचका पाठ करता है । वह अनायासही जयका फल प्राप्त करता है । उत्तरोत्तर उन्नति संपत्ति और श्रीवृद्धिको प्राप्त करता है, इसमें संशय नहीं है ।। ३४ ।।

इति श्री विश्वसारतन्त्रोक्तं लक्ष्मीकवचं कन्हैयाललमिश्रकृत-
हिन्दीटीकासहितं समाप्तम् ।

लक्ष्मीमाहात्म्यम्

अथ वक्ष्ये लक्ष्मीदेव्याः पूजाफलं विधानतः ।
सर्वा वै विफला पूजा कमलापूजनं विना ।। १ ।।

हे महेशानि ! अब लक्ष्मीदेवीकी पूजा करनेसे जो फल मिलता है, उसका वर्णन करता हूं, श्रवण करो । लक्ष्मीजीकी पूजा न करके जो और किसीकी पूजा करता है, वह विफल होती है ।। १ ।।

परिपूर्णफलं नैव जीवहीनं यथा वपुः ।। २ ।।
यथा यथा देवतायाः पूजनं वा यथा गुरोः ।
तथैव हि च सर्वेषां लक्ष्म्यास्तु पूजनं भवेत् ।। ३ ।।

लक्ष्मीजीकी पूजाके सिवाय और देवताकी पूजा करना जीवहीन देहके समान विफल हो जाती है, जिस प्रकार अन्य देवता व गुरुदेवकी पूजा करते हैं इसी विधिके अनुसार लक्ष्मी देवीकी सदा अर्चना करना भी उचित है ।। २-३ ।।

यथाशक्ति हि वितरेत्कमलायै यदीप्सितम् ।
अशक्यं शक्यमेवं वा दानाभावे फलात्ययः ।। ४ ।

अशक्य हो अथवा शक्य हो, मनमें जिसकी इच्छा हो, उसे लक्ष्मी-देवीके समर्पण करे। दानके अभावसे फलकी हानि होती है ॥ ४ ॥

पुष्पं तस्यै च यद्दत्तं तन्मेरुसदृशं मतम्।
दत्तमन्यच्च यत्किञ्चिद्भक्ष्यभोज्यादिकं तथा।
अल्पमप्यथवा तस्य हीनं बहुगुणं भवेत् ॥ ५ ॥

लक्ष्मीदेवीको जो पुष्पप्रदान किया जाता है, वह सुमेरुपर्वत के समान होता है। भक्ष्य, भोज्य जो कुछ लक्ष्मी को दिया जाता है, वह अल्प (थोड़ा) हो अथवा अधिक हो, उससे कई गुना फल प्राप्त होता है ॥५॥

कमलापूजनाच्चैव कमलाराधनादपि।
कमलावन्दनादेव कमलासदृशो भवेत् ॥ ६ ॥

कमलाकी पूजा, आराधना तथा उसकी वन्दना करनेसे मनुष्य कमलाके समान हो सकता है ॥ ६ ॥

कमला च भवेद्देवी कमला सर्व्वदेवता।
कमला पार्व्वती साक्षात् कमला सर्व्वकारणम् ॥ ७ ॥

केवल कमला ही श्रेष्ठ देवी, वही सर्व्वदेवमयी, वह मूर्तिमान् पार्वती और वही केवल सबका कारण है ॥ ७ ॥

यस्याः पूजनमात्रेण त्रैलोक्यपूजनं भवेत्।
कमला च महादेवी त्रिधा मूर्तिर्व्यवस्थिता।
परा चैवापरा चैव तृतीया च परापरा ॥ ८ ॥

केवल लक्ष्मीजीकी ही पूजा करनेसे त्रिभुवनकी पूजा हो जाती है, कमला साक्षात् परा और अपरा तथा परापरा इन तीन मूर्तियोंसे व्यवस्थित है ॥ ८ ॥

यत्र काले न किञ्चित्स्याद्देवासुरमहोरगाः।
त्रैलोक्यं लयमानञ्च तदाभूत्कमलात्मिका ॥ ९ ॥

जिस समय त्रिभुवन जलमें डूबा हुआ था, उस समय देव, असुर, पन्नग (सर्प) कुछ भी विद्यमान न थे किंतु उस समय भी एक कमलामात्र विराजमान थीं ॥ ९ ॥

भूर्भुवोर्मूर्तिरूपा सा एका पूज्या तु सा भवेत् ।
नित्यक्रमेण देवेशी पूजयेद्विधिपूर्व्वकम् ।। १० ।।

लक्ष्मीदेवी भूस्वरूपा और भुवःस्वरूपिणी है, वह सबकी अपेक्षा पूज्यतम है। हे परमेश्वरि ! विधानानुसार प्रतिदिन उसकी पूजा करनी उचित है।। १०

अष्टोत्तरं शतं वापि तन्मन्त्रं प्रजपेत्सुधीः ।। ११ ।।

पवित्रमतिसे सेवक भक्तिसहित देवी लक्ष्मीका बीजमंत्र अष्टोत्तरशत (एक सौ आठ) वार जप करे ।। ११ ।।

असुरञ्च तथा नागा ये च दुष्टग्रहा अपि ।
भूतवेतालगन्धर्व्वाडाकिन्यो यक्षराक्षसाः ।। १२ ।।
क्रूराश्च देवताः सर्व्वे भूर्भुवश्चैव भैरवाः ।
पृथिव्यादीनि सर्व्वाणि ब्रह्माण्डं सचराचरम् ।। १३ ।।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ।
ते तुष्टा परितुष्टाश्च यस्तु लक्ष्मीं प्रपूजयेत् ।। १४ ।।

जो मनुष्य लक्ष्मी देवीकी पूजा करता है, उससे असुर, सर्प, दुष्टग्रह, डाकिनी, भूत, वेताल, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, क्रूर देवतागण, भू, भुव, भैरव, गण, पृथ्वीआदि चराचर ब्रह्माण्ड, ब्रह्मा, विष्णु,, शिव, सभी उससे संतुष्ट होते हैं ।। १२-१३-१४ ।।

कमलापूजनाच्चैव कोटिपूजाफलं लभेत् ।
हन्ति विघ्नान्पूजिता सा तथा शत्रुं महोत्कटम् ।
व्याधयः सर्व्वारिष्टानि पलायन्ते न संशयः ।। १५ ।।

केवल लक्ष्मीजीकी पूजा करनेसे करोड़ गुणी पूजाका फल होता है, उनकी पूजा सारे विघ्न और महोत्कट (महातीव्र) शत्रु नष्ट होते हैं; इसके अतिरिक्त सब व्याधियाँ और सब अरिष्ट (रोगादिक) भाग जाते हैं । इसमें संदेह नहीं ।। १५ ।।

ग्रहा यक्षाः क्षयं यांति भूतवेताल पन्नगाः ।। १६ ।।
असुरा गुह्यका प्रेता योगिनी गुह्यडाकिनी ।
महामयानि दुर्भिक्षमुत्पातानि सहस्रशः ।। १७ ।।

दुःस्वप्नमपमृत्युश्च अन्ये ये ये उपद्रवाः ।
कमलापूजनादेव न तस्य प्रभवंति च ।। १८ ।।

लक्ष्मी देवीकी पूजा करनेसे सब प्रकारकी व्याधियां और सब अरिष्ट विनष्ट हो जाते हैं, और ग्रह, यक्ष, प्रभृति क्षयको प्राप्त होते हैं । कमलाकी पूजा करनेसे भूत, वेताल, पन्नग असुर, गुह्यक, प्रेत, योगिनी, गुह्यडाकिनी, महामाया, दुर्भिक्ष, उत्पात, दुःस्वप्न, अपमृत्यु (अकालमृत्यु) सब नाशको प्राप्त होते हैं । कोई भी उसको तिरस्कार करनेमें समर्थ नहीं है ।।१६-१८ ।।

अणिमादिकसिद्धीश्च पातालगुटिकाञ्जनाः ।
चतुष्कं दिव्यवेतालमाप्नुयात् कमलार्चनात् ।। १९ ।।

केवल लक्ष्मीजीकी पूजा करनेसे अणिमादिक सिद्धि, पातालसिद्धि, गुटिकासिद्धि, वेतालसिद्धि और अंजनासिद्धि प्राप्त होती है ।। १९ ।।

यथा यथा तत्प्रियकृत्सर्व्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
महाभये समुत्पन्ने कमलां यः प्रपूजयेत् ।
तत्क्षणाल्लभते मोक्षं सत्यं सत्यं न संशयः ।। २० ।।

मनुष्य जितना अधिक लक्ष्मीको प्रसन्न करते हैं, वह सब सिद्धियोंका ईश्वर होता है; महाभय उपस्थित होनेपर जो मनुष्य कलाकी पूजा करता है, वह उसी समय भयसे मुक्त हो जाता है । इसमें संदेह नहीं है ।। २० ।।

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ।
ते तुष्टाः सर्व्वतुष्टाश्च कमलां यः प्रपूजयेत् ।
गोहत्या स्त्रीवधश्चैव सर्व्वं पापं प्रणश्यति ।। २१ ।।

जो मनुष्य कमलाकी पूजा करता है, उससे ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर, सदाशिव सभी प्रसन्न होते हैं, और उसके गोहत्या, स्त्रीहत्या, इत्यादि सब पाप दूर हो जाते हैं ।।२१।।

मातरः पितरश्चैव भ्रातरश्चैव सर्व्वतः ।
ते तुष्टाः सर्व्वतुष्टाश्च कमलां यः प्रपूजयेत् ।। २२ ।।

जो मनुष्य लक्ष्मीदेवीकी पूजा करता है उसके मातृगण, पितृगण और भ्रातृगण सब परम संतुष्ट रहते हैं ।।२२।।

भुक्तिमुक्तिफलं तेषां सौभाग्यं सर्व्वसम्पदः ।।
विणुष्लोके वसेन्नित्यं त्रिनेत्रो भगवानिव ।। २३ ।।

जो मनुष्य लक्ष्मीदेवीकी पूजा करता है, उसको भुक्ति और मुक्तिकी प्राप्ति होती है और वह सौभाग्य और सर्व प्रकारकी संपत्तिको प्राप्त होता है और अन्त समय में त्रिनेत्र भगवानके समान विष्णुलोकमें वास करता है ।।२३।।

षष्टिकोटिसहस्त्राश्वमेधानां स फलं लभेत् ।
प्रतिवर्षञ्च यः कुर्याद्भक्त्या तु कमलार्चनम् ।
विष्णुलोके वसेन्नित्यं सर्व्वैश्वर्य्यसमन्वितः ।। २४ ।।

जो मनुष्य भक्तिसहित प्रतिवर्ष लक्ष्मीजीकी पूजा करता है, वह षष्टि-कोटिसहस्र (साठ करोड़ हजार) अश्वमेध यज्ञ करनेके फलको प्राप्त करता है और वह सर्व ऐश्वर्यसमन्वित होकर विष्णुलोकमें वास करता है ।। २४।।

यः करोति हि पुण्यात्मा देवताप्रीतिमाप्नुयात् ।
मनोऽभिलषितं प्राप्य चांते मोक्षमवाप्नुयात् ।। २५ ।।

जो पुण्यात्मा मनुष्य लक्ष्मीदेवीकी पूजा करता है उससे संपूर्ण देवता प्रसन्न होते हैं और वह मनुष्य इस लोकमें समस्त मनोभिलाषापूर्वक अन्तमें मोक्षको प्राप्त करता है ।। २५ ।।

यः करोति विधानेन सर्व्वान्कामान्समश्नुते ।
इह भुक्त्वाखिलान्भोगान्देववत्प्रियदर्शनः ।
अन्ते देव्यास्तु मिलनं लभते नात्र संशयः ।। २६ ।।

जो मनुष्य विधानानुसार लक्ष्मीदेवीकी पूजा करता है, उसकी सब कामना पूर्ण होती है । वह देवताके समान प्रिय-दर्शन हो इस लोकमें अखिल-भोगपूर्वक अन्तमें देवीगणोंमें मिल जाता है। इसमें सन्देह नहीं है ।। २६ ।।

माघे मासि सिते पक्षे पौर्णमास्यां तिथौ तथा ।
स्नात्वाचम्य च शुद्धात्मान्यासान्कृत्वाविधानतः ।। २७ ।।
दीपं संस्थाप्य पुरत उत्तराभिमुखः स्थितः ।
अथ सावरणां देवीं ध्यात्वा विधिवदर्चयेत् ।। २८ ।।

माघ मासमें शुक्लपक्षकी पौर्णमासी तिथिको स्नानकरके आचमनकर विशुद्ध विधानानुसार न्यासविधि समाप्त करे फिर उत्तराभिमुख बैठे। पूर्वकी ओर दीप स्थापनकर उसी दीपमें सावरणा लक्ष्मीदेवीका ध्यान करता हुआ यथाविधि पूजन करे ॥ २७–२८ ॥

अष्टोत्तरसहस्रन्तु जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥ २९ ॥

इस प्रकार यथाविधि पूजा करके अनन्यचित्तसे लक्ष्मीका बीजमन्त्र अष्टोत्तरसहस्र (१००८) वार जप करे ॥ २९ ॥

एवं कृते महालक्ष्मीः प्रीता भवति सर्व्वदा ।
सर्व्वकामसमृद्धात्मा सर्व्वैश्वर्य्यसमन्वितः ।
सर्व्वलोकैकसामान्यः सञ्चरेच्च यथासुखम् ॥ ३० ॥

इस भाँति आराधना करनेसे लक्ष्मी सदा उस पर प्रसन्न रहती है। उस साधककी सर्वविध कामनापूर्ण होती है, और उसको सब प्रकारका ऐश्वर्य प्राप्त होता है, और निःसन्देह वह जगत् में असामान्य रूपसे विचरण करता है ॥ ३० ॥

बहुना किमिहोक्तेन लक्ष्मीतत्त्वपरायणः ।
देव्यर्चकः पुमान्यःस्यात्स च सर्वोत्तमोत्तमः ॥ ३१ ॥

अधिक और वर्णन करनेसे क्या प्रयोजन है, जो मनुष्य लक्ष्मीतत्त्वको जानते हैं और लक्ष्मीजीकी पूजा करते हैं वे निःसन्देह सर्वापेक्षा श्रेष्ठ हैं ॥ ३१ ॥

इति श्रीकन्हैयालालमिश्रकृतहिन्दीटीकासहितं
लक्ष्मीमाहात्म्यं समाप्तम् ।

त्रैलोक्यमंगलात्मकं नाम लक्ष्मीस्तोत्रम्

नमः कल्याणदे देवि नमोऽस्तु हरिवल्लभे ।
नमो भक्तप्रिये देवि लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ॥ १ ॥

हे देवि! तुम कल्याणदायिनी हो, तुम्हें नमस्कार है। हे हरिवल्लभे! तुम्हें प्रणाम करता हूँ। हे लक्ष्मीदेवि! तुम भक्तजनों के अनुरक्त हो, तुम्हें नमस्कार करता हूँ ॥ १ ॥

नमो मायागृहीतांगि नमोस्तु हरिवल्लभे ।
सर्व्वेश्वरि नमस्तुभ्यं लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ॥ २ ॥

हे देवि ! तुम मायाके वश होकर अनेक प्रकारके देह धारण करती हो । हे विष्णुप्रिये ! तुम्हें नमस्कार है । हे देवि ! तुम सबकी ईश्वरी हो, तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ २ ॥

महामाये विष्णुधर्म्मपत्नीरूपे हरिप्रिये ।
वाञ्छादात्रि सुरेशानि लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ॥ ३ ॥

हे लक्ष्मी देवि ! तुमनेही महामायारूपसे जगतको मोहित किया है, तुम विष्णुकी धर्मपत्नी हो । हे हरिप्रिये ! तुम सबकी वाँछा पूर्ण करती हो, इसलिये हे सुरेशानि ! मैं तूमको नमस्कार करता हूँ ॥ ३ ॥

उद्यद्भानुसहस्राभे नयनत्रयभूषिते ।
रत्नाधारे सुरेशानि लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ॥ ४ ॥

हे देवि ! तुम्हारी दीप्ति उदय हुए हजार सूर्योंके समान दुर्निरीक्ष्य है अर्थात् इतना तेज है कि देखी नहीं जाती, तुम तीन नेत्रोंसे परम शोभा पाती हो । हे देवि ! तुम्हीं रत्नोंकी खानि हो । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ४ ॥

विचित्रवसने देवि भवदुःखविनाशिनि ।
कुचभारनते देवि लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ॥ ५ ॥

हे जननि ! तुमने विचित्र वस्त्र पहनकर मनोहर सौंदर्य धारण की है । केवल तुम्हारे अनुग्रहसेही भवदुःखविमोचन होता है अर्थात् संसारी दुःख छूट जाता है । तुम्हारे अतिरिक्त और कोई भी संसारबन्धन रूप दुःखसागरसे रक्षा करने में समर्थ नहीं है । हे देवि ! तुम्हारा अंग पुष्ट उरोजों (कुचोंके) भारसे नम्र है । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ ॥ ५ ॥

साधकाभीष्टदे देवि अन्नदानरतेऽनघे ।
विष्ण्वानंदप्रदे मातर्लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ॥ ६ ॥

हे देवि ! तुम साधकगणोंका मनोभीष्ट (मनकी अभिलाषा) पूर्ण करती हो । तुम अन्नदानद्वारा प्राणियोंकी जीवनरक्षा करती रहती हो, तुम्हारे पवित्र शरीरमें पापका लेश मात्र नहीं, हे मातः ! सदा वैकुण्ठनाथ विष्णुके हृदयमें आनन्द देती हो । मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ ॥ ६ ॥

षट्कोणपद्ममध्यस्थे षडंगयुवतीमये ।

ब्रह्माण्यादिस्वरूपे च लक्ष्मीदेवि नमोऽस्तु ते ।। ७ ।।

हे लक्ष्मी देवि ! तुम देहमें षट्कोणपद्मरूपसे वास करती हो, तुम षडङ्ग युवती (सब दैविक स्त्रियों) में पतिव्रता हो। तुम्हीं ब्रह्माणी, वाराही इत्यादि मातृगण नामसे कही जाती हो । तुम्हें नमस्कार है ।। ७ ।।

देवि त्वं चन्द्रवदने सर्व्वसाम्राज्यदायिनी ।

सर्वानन्दकरे देवि लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ।। ८ ।।

हे लक्ष्मी देवि ! तुम्हारा कमल वदन पूर्णचन्द्रके समान है । तुम प्रसन्न होनेसे चक्रवर्ती राज्यतक दे सकती हो । सबको आनन्द देनेवाली हो । तुम्हें नमस्कार करता हूँ ।। ८ ।।

पूजाकाले पठेद्यस्तु स्तोत्रमेतत्समाहितः ।

तस्य गेहे स्थिरा लक्ष्मीर्ज्जायते नात्र संशयः ।। ९ ।।

जो मनुष्य पूजाके समय सावधान होकर इस स्तोत्रका पाठ करता है उसके घर निःसंदेह कमला अचल होकर सदा निवास करती है ।। ९ ।।

प्रातःकाले पठेद्यस्तु मन्त्रपूजा पुरःसरम् ।

तस्य चान्नसमृद्धिः स्याद्वर्द्धमानो दिनेदिने ।। १० ।।

जो मनुष्य प्रातःकालके समय मंत्र और पूजादि समाप्त करके लक्ष्मी-स्तोत्रका पाठ करता है, उसके घर अन्न आदि की समृद्धि होती है और वही मनुष्य प्रति दिन श्री (लक्ष्मी) की वृद्धिको प्राप्त करता है ।। १० ।।

यस्मै कस्मै न दातव्यं न प्रकाश्यं कदाचन ।

प्रकाशात्कार्य्यहानिःस्यात्तस्माद्यत्नेन गोपयेत् ।। ११ ।।

जिस किसीको यह स्तोत्र नहीं देना चाहिये अर्थात् सर्व साधारण मनुष्यको इसका दान करना उचित नहीं, इसे सदा गुप्त रखना उचित है । इसे साधारण मनुष्यके निकट प्रकाश करनेसे कार्य विफल और अनिष्ट होने की संभावना रहती है, इसलिये यत्नसहित इसको गुप्त रक्खें ।। ११ ।।

त्रैलोक्यमंगलं नाम स्तोत्रमेतत्प्रकीर्तितम् ।

ब्रह्मविद्यास्वरूपञ्च महैश्वर्य्यप्रदायकम् ।। १२ ।।

यह स्तोत्र तीनों लोकोंमें मंगल देनेवाला है, यह ब्रह्मविद्यारूप और महदैश्वर्यदायक है, इसमें संदेह नहीं ।। १२ ।।

पठनाद्धारणान्मर्त्यस्त्रैलोक्यैश्वर्यवान्भवेत् ।
यद्धृत्वा पठनाद्देवाः सर्व्वैश्वर्य्यमवाप्नुयुः ।। १३ ।।

इस स्तोत्रका पाठ करने व इसको धारण करनेसे मनुष्य सहजही में तीन लोकका स्वामी बन सकता है। यह स्तोत्र पढ़ते ही इसके प्रसादसे देवताओंके समान सब ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं ।। १३ ।।

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च धारणात्पठनाद्यतः ।
सृजत्यवति हरंति कल्पेकल्पे पृथक्पृथक् ।। १४ ।।

इस स्तवके धारण और अध्ययन करनेसे ही जगत्स्रष्टा ब्रह्माजी कल्पकल्पमें नानाविधि सृजन करते हैं, देवदेव विष्णु सृष्टिका प्रतिपालन और रुद्रदेव जगत का संहार करते हैं ।। १४ ।।

पुष्पाञ्जल्यष्टकं देव्यै मूलेनैव पठेत्ततः ।
युगकालकृतायास्तु पूजायाःफलमाप्नुयात् ।। १५ ।।

मूलमंत्र पाठ करके लक्ष्मीदेवीको आठ पुष्पाञ्जली देकर इस स्तोत्रका पाठ करनेसे युगकालीनकृत (एक युगतक किये हुए) पूजाका फल मिलता है ।। १५ ।।

प्रीतिमन्योन्यतः कृत्वा कमला निश्चलागृहे ।
वाणी वक्त्रे वसेत्तस्य सत्यं सत्यं न संशयः ।। १६ ।।

इस परमपवित्र स्तवराजका अध्ययन करनेसे लक्ष्मीदेवी उस पर परम प्रसन्न होती है। जो इसका पाठ करता है उसके कंठमें सरस्वती निरन्तर वास करती है। इसमें किसी प्रकारका संशय नहीं ।। १६ ।।

अष्टोत्तरशतञ्चास्य पुरश्चर्य्याविधिः स्मृतः ।। १७ ।।

अष्टोत्तरशत (१०८) बार अध्ययन करनेसेही इस स्तोत्रका पुरश्चरण होता है ।। १७ ।।

भूर्जे विलिख्य गुलिकां स्वर्णस्थां धारयेद्यदि ।
कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ सोऽपि सर्वतपोमयः ।। १८ ।।

जो मनुष्य भोजपत्रपर इस स्तवको लिख सुवर्णकी तावीजमें मढ़ाकर कंठ अथवा दाहिनी भुजामें धारण करता है, वह निःसन्देह सर्व तपोमय होता है ।। १८ ।।

ब्राह्मस्त्रादीनि शस्त्राणि तद्गात्रं प्राप्य पार्वति ।
माल्यानि कौसुमान्येव भवन्त्येव न संशयः ।। १९ ।।

हे पार्वती ! जो मनुष्य यह स्तोत्र अपने गात्रमें धारण करता है, किसी प्रकारकाभी अस्त्र शस्त्र प्रक्षिप्त (प्रयोग किया हुआ) हो वह इस धारण करनेवालेके गात्र को वेध नहीं करता, किन्तु वह उसको कुसुममालाके समान हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं ।। १९ ।।

अस्यापि पठनात्सद्यः कुबेरोऽपि धनाधिपः ।
इन्द्राद्याः सकला देवा धारणात्पठनाद्यतः ।।
सर्व्वसिद्धीश्वराः सन्तः सर्वैर्य्यमवाप्नुयुः ।। २० ।।

इस स्तोत्रका पाठ करनेसेही कुबेर धनाध्यक्षपद प्राप्त किये हैं और इन्द्रादि देवतागणभी यह स्तव धारण और अध्ययन करके सब प्रकार की सिद्धि और सब प्रकारके ऐश्वर्यको प्राप्त किये हैं ।। २० ।।

पुष्पाञ्जल्यष्टकं देव्यै मूलेनैव सकृत्पठेत् ।
संवत्सरकृतायास्तु पूजायाः फलमाप्नुयात् ।। २१ ।।

जो मनुष्य मूलमन्त्रपाठपूर्वक देवीको आठ पुष्पाञ्जली देकर केवल एकबार इस स्तोत्रका पाठ करता है, वह संवतसरकृत (एक वर्षतक की हुई) पूजाका फल प्राप्त करता है ।। २१ ।।

यो धारयति पुण्यात्मा त्रैलोक्यमंगलं त्विदम् ।
स्तोत्रन्तु परमं पुण्यं सोऽपि पुण्यवतां वरः ।। २२ ।।

जो पुण्यवान् मनुष्य त्रिलोकीका, मंगलदाता यह परम पवित्र स्तोत्र धारण करता है वह पुण्यवान् पुरुषोंमें अग्रणी कहा जाता है ।। २२ ।।

सर्व्वैश्वर्ययुतो भूत्वा त्रैलोक्यविजयी भवेत् ।।
पुरुषो दक्षिणे बाहौ नारी वामभुजे तथा ।
बहुपुत्रवती भूत्वा वन्ध्यापि लभते सुतम् ।। २३ ।।

जो पुरुष भक्तिसहित यथानियम भोजपत्रपर यह स्तोत्र लिखकर दाहिनीभुजामें धारण करता है, वह सर्व ऐश्वर्यवान् होकर त्रिलोकका विजय करनेवाला होता है और जो स्त्री बाँई भुजामें धारण करती है वह पुत्रवती होती है। इस पवित्र स्तोत्रको धारण करनेसे वन्ध्या अर्थात् बाँझ स्त्रियाँ भी सर्वोत्तम पुत्रको प्राप्त होती हैं ॥ २३ ॥

ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि नैव कृन्तन्ति तं जनम् ।
पठेद्वा धारयेद्वापि यो नरो भक्तितत्परः ॥ २४ ॥

जो मनुष्य भक्तितत्पर चित्तसे इस स्तोत्रका पाठ करता है, अथवा अपने शरीरमें धारण करता है; उसको शस्त्र अस्त्रादि अधिक क्या ब्रह्मास्त्र भी छेदन करनेमें समर्थ नहीं है ॥ २४ ॥

एतत्तु स्तोत्रमज्ञात्वा योऽर्चयेज्जगदीश्वरीम् ।
दारिद्र्यं परमं प्राप्य सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात् ॥ २५ ॥

इस स्तोत्रको न जानकर जो मनुष्य जगदीश्वरीकी पूजा करता है; वे परम दरिद्रताको प्राप्त होकर शीघ्र ही मृत्यु के वश हो जाते हैं ॥ २५ ॥

यः पठेत्प्रातरुत्थाय सर्व्वतीर्थफलं भवेत् ।
यः पठेदुभयोः सन्ध्योस्तस्य विघ्नो न विद्यते ॥ २६ ॥

जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर इस स्तवराजका पाठ करता है, उसे तीर्थोंमें जानेका फल मिलता है, और जो मनुष्य दोनों संध्याओंके समय इस स्तवराज का अध्ययन करता है, वह किसी प्रकारके विघ्नमें निपतित नहीं होता है ॥ २६ ॥

धारयेद्यः स्वदेहे तु तस्य विघ्नं न कुत्रचित् ।
भूतप्रेतपिशाचेभ्यो भयं तस्य न विद्यते ॥ २७ ॥

जो मनुष्य यह स्तोत्र अपने देहमें धारण करता है उसको किसी प्रकारका विघ्न आक्रमण नहीं कर सकता और भूत, प्रेत, पिशाचप्रभृतिसे भी उसे भय नहीं रहता है ॥ २७ ॥

रणे च राजद्वारे च सर्वत्र विजयी भवेत् ।
सर्वत्र पूजामाप्नोति देवीपुत्र इव क्षितौ ॥ २८ ॥

जो मनुष्य इस स्तोत्रका पाठ व इसे धारण करता है, वह रणमें, राजद्वारमें, सर्वत्रही विजय प्राप्त करता है और सभी लोग सर्वत्र उसकी पूजा करते हैं। वह देवीके पुत्रके समान पृथ्वीतलमें सुखसे विचरण करता है ॥२८॥

एतत्स्तोत्रं महापुण्यं धर्मकामार्थसिद्धिदम् ।
यत्र तत्र न वक्तव्यं गोपितव्यं प्रयत्नतः ।। २९ ।।

यह स्तोत्र परम पवित्र है, इसके द्वारा धर्म, अर्थ और कामकी सिद्धि होती है। इसे जहाँ तहाँ प्रकाश करना उचित नहीं है, यथा संभव गुप्त रखना चाहिये ।। २९ ।।

गोपितं सर्व्वतन्त्रेषु सारात्सारं प्रकीर्तितम् ।
सर्व्वत्र सुलभाविद्या स्तोत्रमेतत्सुदुर्लभम् ।। ३० ।।

और कोई भी विद्या क्यों न हो, वह सुलभतासे प्राप्त हो जाती है। परन्तु यह स्तोत्र अतिदुर्लभ है। सारका भी सारभूत यह स्तोत्र संपूर्ण तन्त्रोंमें गोपनीय कहा गया है।। ३० ।।

शठाय भक्तिहीनाय निन्दकाय महेश्वरि ।
न्यूनांगे अतिरिक्तांगे क्रूरे मिथ्याभिभाषिणे ।।
न स्तवं दर्शयेद्दिव्यं परमं सुरदुर्लभम् ।। ३१ ।।

हे महेश्वरि ! जो मनुष्य शठ अर्थात् लक्ष्मीकी भक्तिसे विहीन है, जो पराई निन्दा करनेवाला है, जो मनुष्य विकलाङ्ग, जिसकी देह अतिस्थूल है, जो मनुष्य क्रूर और झूठ बोलनेवाला है, उसको कभी यह परम पवित्र देवताओंको भी दुर्लभ दिव्यस्तोत्र प्रदान नहीं करना चाहिये ।। ३१ ।।

यत्र तत्र न वक्तव्यं मया तु परिभाषितम् ।
दत्त्वा तेभ्यो महेशानि नश्यन्ति सिद्धयः क्रमात् ।। ३२ ।।

हे महेशानि ! यह मेरा कहा हुआ स्तोत्र जहाँ तहाँ नहीं कहना चाहिये। उन पूर्वोक्त अनधिकारियोंको यह स्तोत्र प्रदान करनेसे समस्त सिद्धियाँ क्रमशः नष्ट हो जाती हैं ।। ३२ ।।

मन्त्राः पराङ्मुखा यान्ति शापं दत्त्वा सुदारुणम् ।
अशुभञ्च भवेत्तस्य तस्माद्यत्नेन गोपयेत् ।। ३३ ।।

जो साधारण मनुष्यके निकट इस स्तवको प्रकट करता है, उससे संपूर्ण मंत्र विमुख हो दारुण शाप देकर पलायन कर जाते हैं और अनेक प्रकारके अशुभ उपस्थित होते हैं, इस कारण यत्नसहित इसको गुप्त रखना चाहिये ।।३३।।

गोरोचनाकुंकुमेन भूर्ज्जपत्रे महेश्वरी ।
लिखित्वा शुभयोगे च ब्रह्मेन्द्रौ वैधृतौ यथा ।।
सर्व्वार्थसिद्धिमाप्नोति सत्यं सत्यं न संशयः ।। ३४ ।।

हे महेश्वरि ! यदि ब्रह्मा अथवा इन्द्र भी शुभयोगमें भोजपत्रपर गोरोचन और कुंकुमसे लिखकर यह स्तव धारण करें तो वे भी सर्वार्थसिद्धि प्राप्त करते हैं, इसमें संशय नहीं है ।। ३४ ।।

कुमारी पूजयित्वा तु देवीसूक्तं निवेद्य च ।
पठित्वा भोजयेद्विप्रान्धनवान्वेदपारगान् ।। ३५ ।।
नाधयो व्याधयस्तस्य दुःखशोकभयं भवेत् ।।
वादी मूको भवेद् दृष्ट्वा राजा च सेवकायते ।। ३६ ।।

प्रथम कुमारीकी पूजा करके देवीसूक्त सहित इस स्तवराजका पाठ करे । इसके बाद वेदके जाननेवाले ब्राह्मणोंको भोजन कराये ; ऐसा करनेसे मनुष्य जगत्में सबकी अपेक्षा धनवान हो जाता है। जो मनुष्य विधानानुसार इस स्तवराजका पाठ करता है, उसको आधि, व्याधि, दुःख, शोक, भय कुछ भी आक्रमण व परास्त करनेमें समर्थ नहीं होते हैं । उसके दर्शनमात्र से ही बोलनेवालेको मूकता प्राप्त होती है और राजा भी दासके समान वशमें हो हो जाता है ।। ३५ ।। ३६ ।।

मासमेकं पठेद्यस्तु प्रत्यहं नियतः शुचिः ।
दिवा भवेद्धविष्याशी रात्रौ भक्तिपरायणः ।
तस्य सर्व्वार्थसिद्धिः स्यात्सत्यंसत्यंमहेश्वरि ।। ३७ ।।

हे महेश्वरि ! जो मनुष्य दिनमें हविष्यान्न भोजन करके रात्रिमें भक्ति-परायण हो विशुद्धाचारसहित एक महीने तक इस स्तोत्रका पाठ करता है उसको निःसन्देह सम्पूर्ण सिद्धियाँ प्राप्त होती है ।। ३७ ।।

षट्सहस्रप्रमाणेन प्रत्यहं प्रजपेत्सदा ।
षण्मासैर्व्वा त्रिभिर्म्मासैःखेचरोभवति ध्रुवम् ।। ३८ ।।

जो मनुष्य प्रतिदिन छः महीनेतक या तीन महीनेतक प्रतिदिन छः जारवार इस स्तोत्रका जप करता है उसे खेचरी सिद्धि प्राप्त होती है ।। ३८ ।।

अपुत्रो लभते पुत्रमधनो धनवान्भवेत् ।
अरोगी बलवांस्तस्य राजा च दासतामियात् ।। ३९ ।।

इस स्तवके प्रसादसे अपुत्र मनुष्यको पुत्र और धनहीनको धन मिलता है। इसके प्रभावसेही रोगोंसे छूटकर अतुलबल, वीर्य प्राप्त किया जा सकता है । जो मनुष्य विधानानुसार इस स्तवराजको पढ़ता व धारण करता है, राजाभी उसके वशमें हो जाता है ।। ३९ ।।

य एवं कुरुते धीमान्स एव कमलापतिः ।
स एव श्रीमहादेवस्तस्य पत्नी हरीप्रिया ।। ४० ।।

जो बुद्धिमान् यथाविधि इस स्तवका पाठादि करता है, वह हरिके सायुज्यपदको प्राप्त करता है, वही सदाशिवके समान होता है, और उसकी स्त्री लक्ष्मी के समान होती है ।। ४० ।।

बहुना किमिहोक्तेन स्तवस्यास्य प्रसादतः ।
धर्म्मार्थकाममोक्षञ्च लभते नात्र संशयः ।। ४१ ।।

अधिक और क्या कहूँ ? इस स्तवके प्रसादसे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों ही प्राप्त हो जाते हैं, इसमें संशय नहीं है ।। ४१ ।।

इति ते कथितं देवि त्रैलोक्यमङ्गलाभिधम् ।
लक्ष्मीस्तोत्रं महापुण्यं संसारार्णवतारकम् ।। ४२ ।।

हे देवि ! मैंने यह तुमसे भवसागरसे परित्राण (रक्षा) करनेवाला महापवित्र त्रैलोक्यमंगलनामक लक्ष्मीस्तोत्र कहा ।। ४२ ।।

ऋजवे सुचरित्राय विष्णुभक्तिपराय च ।
दातव्यञ्च प्रयत्नेन परमं गोपनं त्विदम् ।। ४३ ।।

यह स्तोत्र परम गोपनीय (गुप्त रखने योग्य) है, केवल सुचरित्र, सरल और विष्णुकी भक्ति करनेवाले मनुष्यकोही इसका दान करे ।। ४३ ।।

इति श्रीशंकरभाषितं त्रैलोक्यमंगलनामकलक्ष्मीस्तोत्रं हिन्दी-टीकासहितं सम्पूर्णम् ।

व्रजविहारः

कस्त्वं न्वत्र बलानुजस्त्वमिह किं मन्मन्दिराशङ्कया ।
बुद्धं तन्नवनीतकुम्भविवरे हस्तं कथं न्यस्यसि ।।
कर्तुं तत्र पिपीलिकापनयनं सुप्ताः किमुद्बोधिताः ।
बाला वत्सगतिं विवेक्तुमिति संजल्पन्हरिः पातु वः ।। १ ।।

एक समय श्रीकृष्ण किसी गोपीके गृहमें प्रवेश करके मक्खनकी चोरी कर रहे थे। गोपरमणीने देखकर पूछा "तू कौन है रे ?" श्रीकृष्णने उत्तर दिया "मैं बलरामका छोटा भाई हूँ", गोपिकाने पूछा "इस स्थानपर किस लिये आया है" श्रीकृष्णने उत्तर दिया "मैं अपना घर जानकर धोकेसे यहाँ आगया". गोपिकाने कहा "भला यदि ऐसाही था तो मक्खनके घड़ेमें हाथ क्यों डालते हो ?" श्रीकृष्णने उत्तर दिया कि "इसमें पिपीलिका अर्थात् चीटियाँ पड़ गई हैं उन्हें दूर कर देता हूँ", गोपिकाने फिर पूछा "अच्छा ! बालक नींदमें सो रहे थे, उनको क्यों जगाया ?" श्रीकृष्णने उत्तर दिया "यह जानने के लिये कि सब बछड़े कहाँ चले गये हैं !" इस प्रकार गोपबाला के साथ वार्तालाप करते हुए श्रीकृष्ण तुम्हारी रक्षा करें ।। १ ।।

जीर्णा तरिः सरिदतीव गंभीरनीरा
बाला वयं सकलमित्थमनर्थहेतुः ।
निस्तारबीजमिदमेव कृशोदरीणां
यन्माधव त्वमसि सम्प्रति कर्णधारः ।। २ ।।

एक बार श्रीकृष्ण कर्णधार (खेवइये) बनकर गोपियोंको नदी पार कर रहे थे, उस समय गोपिकायें नदीको गंभीर देखकर कहने लगीं, कि यह नौका अत्यन्त जीर्ण (पुरानी) है, नदी गहरे जलसे परिपूर्ण और हम सब बालिका हैं, इस कारण जो कुछ भी हम देखती हैं सभी अनर्थका हेतु है। किन्तु हे कृष्ण ! हम क्षीणाङ्गियोंका एक यही निस्तार होनेका कारण दीखता है, कि जो माधव स्वयं ही इस समय कर्णधार (खेवइये) हैं ।। २ ।।

श्रीश्रीकृष्णोजयति जगतां जन्मदाता च पाता
हर्त्ता चान्ते हरति भजतां यश्च संसारभीतिम् ।
राधानाथः सजलजलदश्यामलः पीतवासो
वृन्दारण्ये विहरति सदा सच्चिदानन्दरूपः ।। ३ ।।

तीनों जगत् की सृष्टि, स्थिति और संहारके कारण, भक्तजनोंके सांसारिक भयको नाश करनेवाले, काले बादलके समान सांवले पीतवस्त्रधारी श्रीकृष्ण सर्वदा वृन्दावनके वनोंमें विहार करते हैं, वास्तवमें वह सच्चिदानन्द-स्वरूप हैं ।। ३ ।।

ज्योतीरूपं परमपुरुषं निर्गुणं नित्यमेकं
नित्यानन्दं निखिलजगतामीश्वरंविश्वबीजम् ।
गोलोकेशं द्विभुजमुरलीधारिणं राधिकेशं
वन्दे वृन्दारकविधिहरिहरव्रातवन्द्यांघ्रिपद्मम् ।। ४ ।।

जो ज्योतिःस्वरूप हैं, गुणोंसे परे तथा नित्यानंदस्वरूप हैं, जो केवल परमपुरुष, निर्गुण, अविनाशी और भुवनोंके अधीश्वर हैं । ब्रह्मा, शिव सभी जिसके चरणोंकी वन्दना करते हैं, वही नारायण द्विभुज मुरलीधारण करनेवाले राधिकानाथ रूपसे वृन्दावनमें वास करते हैं, मैं उन गोलोकपतिके चरण-कमलोंमें प्रणाम करता हूँ ।। ४ ।।

येषां श्रीमद्यशोदासुतपदकमले नास्ति भक्तिर्नराणां
येषांमाभीरकन्याप्रियगुणकथनेनानुरक्ता रसज्ञा ।।
येषां श्रीकृष्णलीलाललितगुणकथा सादरौ नैव कर्णौ
धिक्तान्धिक्तान्धिगेतान्कथयति नितरां कीर्त्तनस्थो मृदङ्गः।५।

हरि संकीर्त्तनके समय मृदंग जो' धिक्तान् धिक्तान, धिक्तान्" प्रभृति ध्वनि करता है, उसका तात्पर्य यह है—वह मृदंग यह कहकर खेद प्रकट करता है कि श्रीकृष्णके चरणकमलमें जिनकी भक्ति नहीं है, जिह्वा गोपरमणी-गणोंके प्रियपात्र हरिके गुण कीर्त्तन करनेमें अनुरागी नहीं है, श्रीकृष्णकी लीला सुननेको जिनके दोनों श्रवण (कान) उत्साह प्रकट नहीं करते हैं, उनको धिक्कार है, धिक्कार है ,धिक्कार है ।। ५ ।।

वृन्दावने वृक्षलताप्रतानैर्वृन्दावनेशस्य विहारहेतोः ।
पुरा विधात्रा रचितान्सुकुञ्जाञ्जगाम कृष्णः सह राधया सः ॥६॥

वृन्दावनपति श्रीकृष्णके विहार करनेको स्वयं विधाताने वृन्दावन में अनेक प्रकारके वृक्षलतासे मनोरम कुंज बनाये हैं । उन्हीं विधिनिर्मित कुंज-वनों में श्रीकृष्ण राधासहित भ्रमण करते हैं ॥ ६ ॥

नवीनमेघोपमनीलदेहः सुपीतपट्टाम्बरयुग्मधारी ।
स्मितानन: कुण्डलवान्किरीटी वंशीधरो मालतिमाल्यधारी ॥७॥

श्रीकृष्णकी देह नये बादलके समान श्याम है, शोभायमान पीले वर्णके रेशमी वस्त्र पहने हुए हैं, उनका वदन मन्द मुसकानसे सुशोभित है, उनके कानोंमें सुन्दर कुण्डल शोभायमान हैं, मस्तकपर किरीट हाथमें बाँसुरी और गलेमें मालतीकी माला पड़ी है ऐसे भगवान् शोभायमान हो रहे हैं ॥ ७ ॥

गोपीजनानन्दकरो मुरारिर्वृन्दावनेन्द्रो वनमाल्यशोभी ।
वंशीनिनादेन व्रजांगनानां मनांसि सम्मोहितवान्स कामी ॥८॥

गोपीजनोंको आनन्द देनेवाले, वनमाला धारण करनेवाले वृन्दावनपति श्रीकृष्ण विहारकी कामना से बँसी बजाकर व्रजरमणीगणोंका मन मोह लिया करते हैं ॥ ८ ॥

गोपीजना यमिह कामवृशा भजन्ते
यं भक्तिभाज इह केवल भक्तिभावैः ॥
यं योगिनो हृदि धिया परिचिन्तयन्ति
तं केवलं कमललोचनमाश्रयेऽहम् ॥ ९ ॥

गोपिकागण कामदृष्टिसे जिनका भजन करती हैं, भक्त मनुष्य भक्ति-भावसे जिनकी आराधना करते हैं, योगीजन योगबलसे जिनका चित्रमें दर्शन करते हैं मैंने उन्हीं कमललोचन कृष्णका आश्रय ग्रहण किया ॥ ९ ॥

वनेवने कुञ्जवने मुरारिः परिभ्रमन्भ्राजति राधिका च ।
सहैव कुञ्जे रमते च राधया पायादपायादिह कृष्ण एकः ॥१०॥

जो वनवनके कुंजकुंजमें श्रीराधाके संग भ्रमण और विहार करते हैं, वे कृष्ण संपूर्ण अपायोंसे हमारी रक्षा करें ॥ १० ॥

वृन्दारण्ये विहरति सदा वासुदेवो दयालु-
र्गोपस्त्रीभिःस्मरशतशरैर्भिन्नहृत्कामुकाभिः ।।
गोपैर्बालैरपि सहचरैः सार्द्धमानन्दयुक्तैर्योऽसौ
कृष्णः परमकरुणस्तं सदा चिन्तयेऽहम् ।। ११ ।।

जो कामसे आतुर हुई गोपरमणियोंके संग वृन्दावनमें विहार करते हैं, जो गोपबालकोंके संग क्रीडा करते हैं मैं उन्हीं करुणामय श्रीकृष्णका सदा चिंतन करता हूँ ।। ११ ।।

इति श्रीसौभाग्यलक्ष्मीः मुरादावादनिवासि—कात्यायनगोत्रोद्भव-
पंडितकन्हैयालालमिश्रकृतहिन्दीटीकासहिता समाप्ता ।

समाप्तोऽयं ग्रन्थः

पुस्तकें मिलने के स्थान

१) खेमराज श्रीकृष्णदास,
श्रीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
खेतवाडी, मुंबई - ४०० ००४.

२) खेमराज श्रीकृष्णदास,
६६, हडपसर इण्डस्ट्रिअल इस्टेट
पुणे - ४११ ०१३.

३) गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
लक्ष्मीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
व बुक डिपो,
अहिल्याबाई चौक, कल्याण
(जि. ठाणे - महाराष्ट्र)

४) खेमराज श्रीकृष्णदास,
चौक - वाराणसी (उ.प्र.)

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS